2/93

मानव मन्दिर

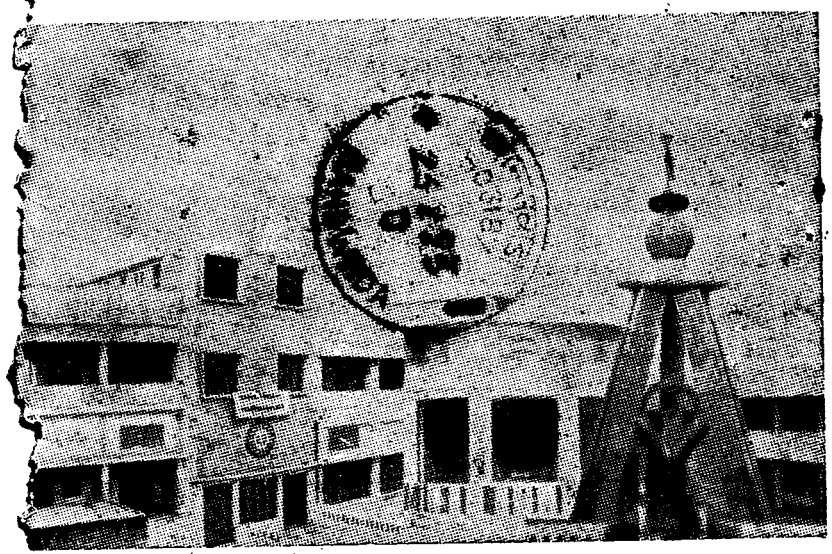

फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट

सुतैहरी रोड, होशियारपुर

FORM I
(See Rule 8)

Place of Publication	Hoshiarpur.
Date of Publication	10th of every month
Periodicity of publication	Monthly
Printer's Name	Ravi Nanda
Nationality	Indian
Address	Manavata Mandir, Hoshiarpur.
Editor's Name	[illegible] Nanda
Nationality	Indian
Address	Manavata Mandir, Sutehti Road, Hoshiarpur.
Name and address of individuals, who own the Manav Mandir or partners or shareholders, holding more than one percent of the total	Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

I, Ravi Nanda hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dated : 10 Signature of Publisher

Printed and Published by : Ravi Nanda at Shiv Dev Rao Press, Manavta Mandir, Hoshiarpur for the Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

मानवता मन्दिर होशियारपुर में बगला मासिक सत्संग

14-2-93 प्रात: 8-30 बजे होम । 5 बजे सायं : निवास श्री देशराज शर्मा, नं. 872 सैक्टर 7, पञ्चकुल्ला निकट

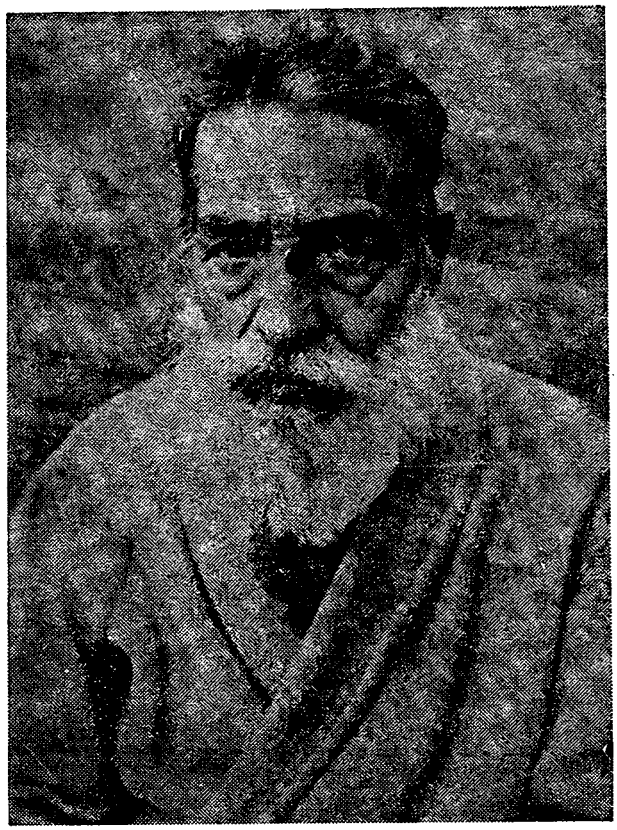

Param Sant Param Dayal
Pt. Faqir Chand Ji Maharaj

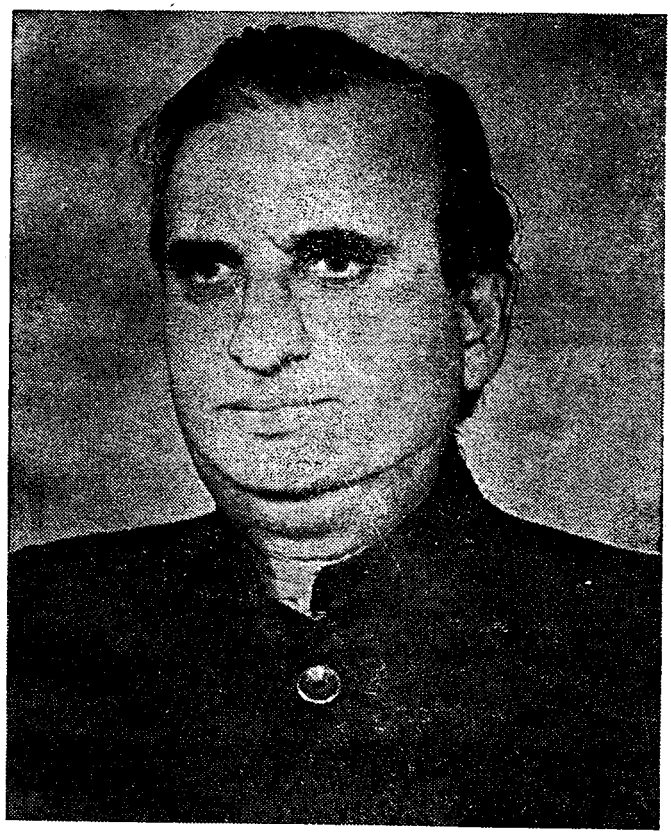

Param Sant Manav Dayal
Dr. I. C. Sharma Ji Maharaj

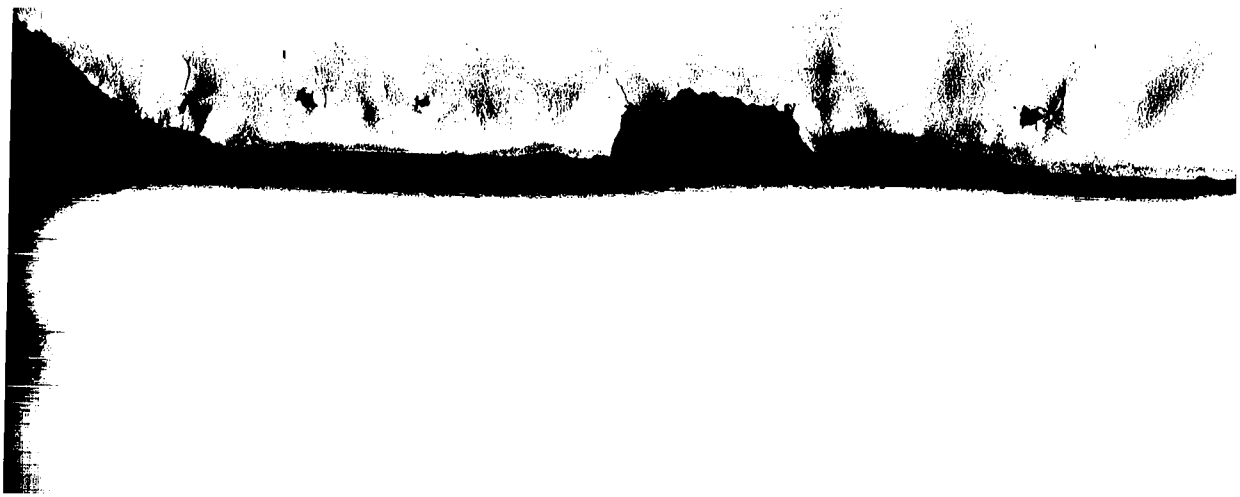

मासिक---

मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक, सांस्कृतिक
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास की
सेवा में संनग्न मासिक पत्र।

BE MAN
मनुष्य बनो

सम्पादक :
श्री रवि नन्दा

वर्ष 19	बुधवार 10 फरवरी, 1993	संख्या 10

कर्म और विभिन्न दशायें

दातादयाल महर्षि शिवब्रत लाल जी वर्मन

लेता है सो जल्द ले, कही सुनी मत मान ।
कही सुनी जुग-जुग चले, आवागमन बंधान ।।

कर्म में सारे गुण हैं, क्योंकि कर्म की सम्भावना केवल ऐसे लोक में है, यहां भिन्नता या अनेकता है, जहां भिन्न 2 रूप, भिन्न 2 दृश्य मन के आकर्षण के लिए काम में व्यस्त और एकाग्रचित्त करने का प्रबन्ध करते हैं। मनुष्य का चित स्वभाव से ही नवीनता प्रिय है, क्योंकि इसमें विभिन्न प्रकार के प्रभाव सूक्ष्म आकृत्यों के रूप में हृदय में बैठ कर, तरह २ के दृश्य देखने से उभरने के इच्छुक होते हैं, जिससे काम करने की गति को उभार मिला करता है। नई 2 उमंगें, नये 2 उत्साह पैदा होते हैं। कुछ समय के लिए, वह (चित्त) इनसे मिल कर उनमें प्रसन्नता और दिल बहलाव ढूंढता हुआ, इन्हीं को ही अपनी उन्नति का साधन बना लेता है। फिर उसकी दृष्टि में विशालता आ जाती है। जिस समय मन या चित्त प्रकृति की विचित्रता को देखता है, वह

अचंभित हो जाता है उसकी विलक्षणता हृदय में समा जाती है और क्रमशः वह मन की उन्नति का कारण बनती है और भावों को एकाग्र करने में सहायक होती है। यहा मैं इस संदर्भ में एक दृष्टान्त से आपको समझाने की कोशिश करूंगा।

रात का समय था, नींद नहीं आ रही थी। लड़कपन था, हमारा छोटा भाई नारायणसिंह अभी पैदा ही नहीं हुआ था। हम अपनी मां के साथ उसकी ही खाट पर सोए हुए थे। बच्चों को प्रायः किस्सा कहानी सुनने का बहुत शौक होता है। हमने भी मां से कहा, "अम्मा! कोई ऐसी मज़ेदार कहानी सुनाओ, सुनकर चित्त प्रसन्न हो जाए। मां बोली सुनो :---

किसी चमार की एक लड़की थी। जब वह शादी के लायक हुई, तो उसके मां-बाप ने सोचा कि उसका कहीं रिश्ता तै कर दिया जाय। लड़की समझदार थी। वह बोली, "पिता जी! मैं तो उससे विवाह करूंगी जो सबसे बड़ा हो। यदि सबसे बड़ा न हो, तो कम से कम बुद्धि तथा विवेक में मुझ से तो बड़ा हो ताकि मुझमें उसके प्रति श्रद्धा बनी रहे और मैं उसका आदर मान कर सकूं। बाप ने हंस कर कहा, "ईश्वर ने पुरुष को स्त्री से श्रेष्ठ ही बनाया है।" लड़की बोली, "नहीं, नहीं, पिता जी ऐसा नहीं है। कई स्त्रियां तो ऐसी होती हैं कि जो समझ बूझ और बल से पुरुषों से भी बढ़ी चढ़ी होती हैं। जहां स्त्री पुरुष से अधिक विवेक वाली होती हैं, वह उसका आदर नहीं करती। परिणाम यह होता है कि दोनों में परस्पर बनती नहीं, घर उत्पात मचा रहता है। मुझे न तो उत्पात वाले घर में

रहना पसन्द है, और न ही ऐसे पति के साथ रहना पसन्द है जिसका कोई मान-सम्मान ही न हो। बाप ने उत्तर दिया, "बेटी! तू गंवार है। देख न तेरी मां का मेरे से विवाह हुए कितने वर्ष हो गए, हम मिल जुल कर रह रहे हैं कि नहीं।" लड़की ने कहा, "रह तो रहे हो। मेरी माता तुमसे अधिक बलवान तथा बुद्धिमान है। सब जानते हैं कि आप दोनों की बनती नहीं लड़ाई झगड़े से अपने घर को नर्क बना रखा है। ऐसा भी कोई रहना होता है? आप दोनों के रोज़ 2 के लड़ाई झगड़े को देख कर ही मैंने मन ही मन यह ठान लिया है कि मैं किसी अच्छे पुरुष के (जिसका कि मैं आदर सम्मान कर सकूं) साथ विवाह करूंगी नहीं तो करूंगी ही नहीं।"

बाप ने कहा, " तेरी मां चिड़चिढ़े स्वभाव की है उसमें अहंभाव बहुत है तभी तो वह मुझे कुछ भी नहीं माननी फिर भी किसी न किसी तरह से हम घर चला ही रहे हैं। '

लड़की चतुर थी अति चतुर। उसने बाप से कहा, "बात असल में यह है कि तुम मेरी मां से कमज़ोर पड़ते हो।"

बाप ने पूछा, "तुमने यह कैसे जाना कि मैं तेरी मां से कमज़ोर हूं।"

लड़की ने उत्तर दिया, "पड़ौस की स्त्रीयां ऐसा कहती हैं कि यदि स्त्री पुरुष से अधिक बलवान होती हैं, तो घर में लड़के पैदा होते हैं, यदि पुरुष बलवान होता है तो लड़कियां ही लड़कियां होती हैं। यदि दोनों बराबर हों, तो सन्तान

दोषपूर्ण या नपुंसक होती है, क्योंकि जिसका पल्ला कमज़ोर होता है, प्रकृति माता उसकी तरफ़दारी करती है। आप ही देख लो न क्या यह प्रत्यक्ष नहीं है कि तुम्हारे घर में सिवाय मेरे सब लड़के ही लड़के हैं। सात भाईयों के बीच मैं एक बहन हूं। इससे क्या यह सिद्ध नहीं होता कि तुम मां से कमज़ोर हो।"

बाप हंसा और बोला, "तो तू लड़की कैसे पैदा हो गई मेरे घर?"

लड़की बोली, "कोई ऐसा कारण हो गया होगा या ऐसा समय आ गया होगा कि मां बीमारी या अस्वस्थता के कारण कमज़ोर हो गई और उस समय मैं पेट में आ गई हूंगी। यदि मांकम्जोर नहीं हुई होती, तो मेरी जगह भी लड़का ही पैदा होना था। वैसे शरीरों को देखने से भी पता चलता है कि तुम कमज़ोर हो तथा मां बलवान है।"

बाप इसका कोई उत्तर नहीं दे सका। बाप ने बहुत समझाया, परन्तु लड़की ने शादी से मना कर दिया। कुछ समय के बाद ऐसा हुआ कि उसी गांव का ठाकुर राजा उधर से निकला। साधारणतया चमार लोग गांव से बाहर ही रहते हैं परन्तु उस लड़की ने किसी तरह यह देख लिया कि सभी लोग राजा का सम्मान कर रहे हैं उसे झुक 2 कर प्रणाम कर रहे हैं, उसने सोचा यह सबसे बड़ा आदमी है। वह सबसे बड़े आदमी के साथ ही शादी करना चाहती थी। वह जलूस के साथ हो ली, ताकि वह अवसर पा कर राजा से शादी की बात करे। जलूस चला जा रहा था और वह भी

जलूस के पीछे 2 जा रहो थी। थोड़ी देर के बाद उसने देखा कि सामने से एक ब्राह्मण आ रहा है। पण्डित को देखते ही राजा ने झुक कर प्रणाम किया। लड़की ने समझा कि ब्राह्मण तो राजा से भी बड़ा है, तभी तो राजा ने उसको प्रणाम किया। उसने राजा को छोड़ कर उसी पण्डित से ही विवाह करना चाहा। वह जलूस को छोड़ कर पण्डित के पीछे हो ली। जब पण्डित जी ने देखा कि एक नवयुवती उनके पीछे चली आ रही है तो उन्होंने कहा, "देवी तू क्या चाहती है ?"

लड़की बोली, "मैंने प्रण किया हुआ है कि मैं दुनियां में सबसे बड़े आदमी के साथ विवाह करूंगी। तुम सब से बड़े आदमी हो, इसलिए में तुमसे ही विवाह करूंगी।"

ब्राह्मण ने पूछा, "तुमने यह कैसे जाना कि मैं बड़ा आदमी हूं ?"

लड़की बोलो, "तुम बड़े आदमी ही तो हो तभी तो गांव का राजा झुक कर तुम्हें प्रणाम कर रहा था।"

ब्राह्मण आगे बढ़ता गया लड़की उसके पीछे 2 चलती गई। ब्राह्मण ने एक मन्दिर में पहुंच कर, मन्दिर की मूर्ति को सिर झुकाया। अब लड़की ने समझा कि मूर्ति तो ब्राह्मण से भी बड़ी है। उसने मन्दिर के देवता के साथ व्याह करना चाहा। उसने ब्राह्मण का पीछा छोड़ दिया और मन्दिर के बाहर एक दम चुपचाप हो कर बैठ गई। थोड़ी देर के पश्चात मन्दिर की ओर एक कुत्ता आया और उसने अपनी एक टांग उठा कर, मन्दिर की मूर्ति पर पेशाब कर दिया। लड़की ने समझा कि यह कुत्ता तो मन्दिर के

देवता से भी बड़ा है जिसने देवता की मूर्ति पर पेशाव कर दिया। यह सोच कर वह कुत्ते के पीछे हो ली। कुत्ता आगे 2 और लड़की पीछे 2। कुछ दूर चलने के बाद उस लड़की ने देखा कि एक चमार के लड़के ने एक ढेला उठा कर कुत्ते को दे मारा। कुत्ता कांय-कांय करता भाग गया। लड़की ने ढेला मारने वाले लड़के को ही अब सबसे बड़ा समझा और उससे विवाह करना चाहा। संयोग की बाप कि वह लड़का वही ही लड़का था, जिसके साथ उसका बाद विवाह करना चाहता था। सब लोग प्रसन्न हो गए और समझा बावली लड़की को समझ आ गई। उस लड़की की शादी उस लड़के से कर दी गई। वह लड़की रात दिन अपने पति की ऐसी सेवा किया करती जैसे कि वह ईश्वर हो। कुछ दिन तक ऐसी सेवा चलती रही। दोनों पति पत्नी बहुत ही प्रसन्न थे। मगर थोड़े समय के पश्चात लड़की का रुझान किसी दूसरी ओर हो गया। एक दिन किसी कारण उनमें अनबन हो गई। लड़की के क्रोध का पारा ऊपर चढ़ गया। उसने आव देखा न ताव डंडा उठा कर पति को मारना शुरु कर दिया वह चुपचाप जान बचा क बाहर भाग गया। उसके जाने के बाद लड़की ने सोचा मैंने इसके साथ विवाह क्यों किया? यह तो मुझसे बड़ा नहीं है, इससे तो बड़ी मैं हूं। मैं तो सबसे ही बड़ी हूं। मैं अपने ही साथ क्यों न विवाह कर लूं? अपने मन में वह अपनी ही बड़ाई की बात सोचने लगी। उसके जितने दबे हुए संस्कार थे वे धीरे धीरे उभरने लगे उसका रुझान अपनी ही आत्मा के सोच विचार की ओर होता गया और वह कुछ समय के बाद महाज्ञानी बन गई उसने तत्व को पहचान लिया और विवाह की चिन्ता से स्वतन्त्र हो गई। वह

शान्ति तथा आनन्द से जीवन व्यतीत करने लगी। यह कहानी हमारी मां ने सुनाई। कहानी पुरानी है, साधारण है, मगर सोचने विचारने योग्य है। जो कुछ भी है मनुष्य के अपने ही अन्दर है।

न देखा वह कहीं जलवा,
जो देखा खानये दिल में।
बहुत मसजिद में सिर मारा,
बहुत सा ढूंढा बुतखाना में।

जिस समय कर्म और इच्छा के क्रम में दृष्टि ऊंची हो जाती है, मनुष्य अपनी असलियत की ओर झुकता है और जीवन के उद्देश्यों को पूरा कर लेता है, तब उसे दुनिया की स्थिति, स्वप्न और ख़याल से अधिक प्रतीत नहीं होती। उसे लगने लगता है कि जो देखा वह ख्वाब व ख्याल था और जो सुना वह फ़रेब और धोखा था।

कर्म करने वाले को अपने मन के अन्तर में घुस कर तनिक सोचना चाहिए कि प्रकृति ने उन्हें किस विचार के लिए यहां भेजा है और वह उस दृष्टि को विचार में रखते हुए, रात दिन कर्म करता रहे। वह उसी विशेष काम का ही हाथ में ले और उस काम में मन लगाये। उसी से ही लगाव और सम्बन्ध पैदा करे। किसी के कहने सुनने में न आए। दूसरों को इसकी खबर ही क्या है कि कर्म करने वाले के मन के अन्दर कितनी शक्ति है। कोई किसी के मन के अन्दर नहीं घुस सकता और न ही कोई किसी की योग्यता का अनुमान लगा सकता है। मनुष्य स्वयं ही

अपना मन्त्री तथा सलाहकार है।

अपने चारों ओर दृष्टि डालो। जब एक तुच्छ पौधा वृक्ष के रूप में एक विस्तृत मैदान में खड़ा हो जाता है, तो वह हजारों व्यक्तियों को निमन्त्रण देता है कि आओ मेरे हृदय को देखो, मेरे फलों को खाओ और यदि धूप की तेज़ी से व्याकुल हो, तो मेरी छाया में आ कर आराम कर लो। असंख्य पक्षी उसकी जड़ और शाखाओं में घोंसले बनाते हैं, कितने ही मकौड़े इसके पत्तों की लपट में आराम करते हैं।

दानशीलता का उदाहरण इस वृक्ष से बढ़ कर और कहां मिलेगा? वृक्ष पुकार 2 कर उच्च स्वर से कह रहा है, कि ए भूखो! आओ तृप्त हो कर मेरे फल खाओ। यह न समझो कि तुम्हारे द्वारा मेरे फलों को खा लेने से मेरे में कुछ कमी आ जाएगी। नहीं, नहीं। तुम फलों के गूदे को खा लो और गुठलियों को पृथ्वी के अन्दर डाल दो, उसमें मुझ जैसे लाखों वृक्ष उत्पन्न हो जायेंगे और तुमको भूख से छुटकारा मिल जायेगा।

देखो कर्म के सिलसिले में, इस वृक्ष ने क्या 2 काम किए। वह थके मांदे राहगीरों से कहता है कि ए राहगीरो! यदि तुम सूर्य की धूप से घबराए हुएहो, तो चिन्ता न करो। यदि तपती हुई रेत की गर्मी से, तुम्हारे पांव में छाले पड़ गये हैं, तो व्याकुल मत हो। आओ मैं सूर्य की गर्मी अपने ऊपर ले लूंगा और तुमको अपनी गोद में आराम दूंगा। मैं न ही केवल जीवित रह कर, इस जीवन में ही तुम्हारे आराम और सजावट का सहारा बना रहूंगा, किन्तु तुम मुझ को काट डालो और मेरे शहतीरों से अपने मकान की

छतों को पाटो। मेरी लकड़ियाँ ले कर जलाओ। मैं जीते जी तो तुम्हारे काम में आऊंगा ही, मरने पर भी तुम्हारे काम की वस्तु बनूंगा। केवल मैं अकेला ही नहीं बीज ने इतने वृक्ष पैदा कर दिए हैं वे भी विभिन्न तरीकों से तुम्हारे काम आयेंगे। जब तक सृष्टि है, तब तक मेरी सेवा क्रम इसी तरह चलता रहेगा। मैं प्रसन्नता से और सच्चे दिल से बराबर अपना कर्तव्य पालन करता रहूंगा। देखा तुमने! इस दृष्टि से एक तुच्छ बीज ने क्या २ काम किए हैं, क्योंकि उसमें काम करने की अपनी शक्ति छुपी हुई थी।

इसी प्रकार ऐ मेरे मित्रो! तुम्हारे हृदय में भी शक्तियों का भण्डार भरा पड़ा है, बस तनिक गति देने की आवश्यकता है। काम करते समय न किसी की सुनो, न किसी से कुछ कहो, किसी से सम्मति भी मत लो। केवल अपने ही अन्तर में प्रवेश करके, थोड़ा सा संस्कार दिए गए बीज को कुरेद दो, इससे दुनिया की समस्त शक्तियाँ तुम्हारी हो जायेंगी और तुम्हें कुछ न कुछ बना देंगी। यदि काम से जी चुराते हो, तो उसमें किसी और को क्या दोष दिया जा सकता है। यह दोष तुम्हारा अपना ही है। यदि दोष तुम्हारा है तो भुगतो। कोई क्या करे? इसलिए बार 2 आपको कहा जा रहा है कि कर्म करते ही चले जाओ। समय आयेगा, असलियत अपने आप ही समझ में आ जायेगी और तुम शान्ति के स्थायी जीवन के अधिकारी बन जाओगे, जिसमें न कुछ करना है न धरना, न जन्मना है न मरना, न आना है न जाना और यही इष्ट पद है।

अलख लखा, लालच लगा, कहत न आवै बैन।
निज मन धसो स्वरूप में, सतगुरु दीनो सैन ।

आप आपको आप पिछानो।
कहा और का एक न मानो ॥

फ़कीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट सुतैहरी रोड, होशियारपुर को दिया धन आयकर अधिनियम की धारा80-जी के अन्तर्गत,आयकर आयुक्त के पत्र नं. ***JUDL TRUST 13999 dt. 31-12-91***, साल ***30-4-9194*** तक आयकर से मुक्त है।

चुनाव

परम सन्त परम दयाल पण्डित फ़क़ीर चन्द जी महाराज

❖ का सत्संग जो 1966 में दिया गया ❖

जीवन उस मालिक, परमतत्व की खोज में व्यतीत हुआ। मौज दाता दयाल महर्षि शिववृत लाल के चरणों में ले गई। मालूम नहीं दाता ने मुझे यह काम क्यों सौंपा कि निबल, अबल, अज्ञानी जीवों की सहायता करना। यह जो कुछ भी सन्सार में हो रहा है सब मौज ही का खेल है। यह संसार किसी नियम से बना है। बिना कारण के कोई काम नहीं होता। संसार संकल्पमय है, मनोमय है। इस जगत् के कानून बनाने वाले का नाम आदि मनु ही था, जिसने मानव वंश को सत्यम पद पर रहने का उपदेश दिया था।

संसार की और बिशेषकर भारत की दुर्दशा को देखकर विचार आता है कि मानव जाति क्यों इतनी गिर गई है। इसलिए कि हमने उन नियमों का पालन करना छोड़ दिया

है, जो आदि मनु ने बनाए थे।

चुनाव आ रहे हैं ख़्याल आया कि मेरे गुरु दाता दयाल जी महाराज ने जो जगत् कल्याण के काम करने की मेरी ड्यूटी लगाई थी, उसका पालन करते हुए चुनाव के सम्बन्ध में अपने विचार प्रगट करूं।

मैं जानता हूं कि पहले तो मेरी बात को सुनने वाले हैं ही नहीं, यदि कोई सुनेगा भी, तो उस पर गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं करेगा और यदि किसी ने विचार किया भी, तो उस पर वह अमल नहीं करेगा फिर भी दीवाना बनकर अपने विचार प्रगट करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं। प्रजा-तन्त्र के विधान के अनुसार, शासन को क़ायम रखने तथा चलाने के लिए जनता की राय से चुनाव में लोग चुने जाते हैं और इन निर्वाचित लोगों के हाथ में ही शासन की बागडोर सम्भाली जाती है। शासन करने वालों का मुख्य कर्त्तव्य यह है कि वे देखें कि मनुष्य जो भी उपाय सुख तथा शान्ति को प्राप्त करने के लिए करता है, वह प्राकृतिक नियमों के अनुसार हैं कि नहीं और उन्हें जनता को इन नियमों के अनुसार चलने पर विवश करना चाहिए।

परन्तु कठिनाई तो इस बात की है, जो शासन की डोर सम्भालते हैं, वह स्वयं ही नियमबद्ध नहीं होते। उनको प्राकृतिक नियमों का ज्ञान नहीं होता, वे संयम नहीं रख सकते। इसलिए ऐसे व्यक्तियों से यह आशा रखना कि वे अपने आचरण से, अपनी तदबीर या तजवीज़ से जनता को सही मार्ग दिखा सकेंगे,असम्भव है। अत: यह वर्तमान चुनाव प्रणाली किसी सूरत में भी अमन और शान्ति नहीं ला सकती। मैं जो कुछ भी कह रहा हूं आत्मिक और मानसिक जगत्

के कानून को समझ कर ही कह रहा हूं। यह पार्टियों का चुनाव की प्रणाली एक मीठा ज़हर है। क्यों? क्योंकि यह जगत् मन का है, संकल्प का है। हर एक प्राणी अपने ही संकल्प से, ख्याल से, विचार से अपनी दुनिया बना लेता है। इन चुनावों में लोग एक दूसरे के विरुद्ध ईर्ष्या, द्वेष तथा घृणा के विचार रखते हैं और इनके यह दूषित विचार ब्रह्माण्ड में जाते हैं, फैलते हैं, जिसका परिणाम सबके लिए दुःखदाई होता है। "जैसा ख्याल, वैसा हाल", "जैसी मति वैसी गति", "जैसो करनी वैसी भरनी"। वर्तमान चुनाव प्रणाली पूरी मानव जाति के लिए घातक सिद्ध हो रही है। फिर इससे बचने का उपाय क्या है? इलाज तो प्रत्येक रोग का हो सकता है। बशर्ते कि इलाज कराने वाले को अच्छा वैद्य मिल जाए और रोगी वैद्य का ठीक तरह से इलाज करे। मेरे विचार में तो पार्टी चुनावों को बन्द कर दिया जाय। न कांग्रेस रहे, न जनसंघ रहे, न कोई दूसरी पार्टी। हर एक प्रान्त, नगर और ग्राम से केवल योग्य व्यक्ति ही चुन लिए जायें और उन चुने हुए लोगों का वर्ग ही शासन कार्य करे।

चुनाव में द्वेष भाव आदि विचारों का परिणाम

मैंने कहा है कि वर्तमान चुनाव की प्रणाली मीठा ज़हर है। चुनाव से पहले और चुनाव के दौरान भिन्न २ पार्टियों में जो द्वेष भाव, कट्टरता तथा दूषित वातावरण का बोलबाला होता है, उसका बहुत ही बुरा परिणाम निकलता है। मैं मानव जाति का भविष्य, प्रकृति के नियमों के अनुसार ख़तरे में देखता हूं। भूचाल, बाढ़ें

बीमारियाँ, भुखमरी, उपद्रव अशान्ति आदि के दृश्य संसार में बहुतायत में देखे जाते है। क्यों ? क्योंकि मनुष्य के दिमाग़ के अन्दर,उसके अचेतन मन में बुरे विचार घर कर गये हैं। जब बुरे तथा प्रकृति के विपरीत विचार मनुष्य के अन्दर पैदा होते हैं तो उनका प्रभाव उसके शरीर पर तथा वातावरण पर पड़ता है। पूरा का पूरा वातावरण दूषित हो जाता है, दूषित वातावरण में ना तो किसी मनुष्य की और न ही किसी देश की तरक्की हो सकती है। इस समय पूरा विश्व ख़तरे में है। मगर मैंने जो इलाज बताया है कि मनुष्य को चाहिए कि वह अपने भावों, विचारों, संकल्पों इच्छाओं को शुद्ध रखे, अपनी नीयत को साफ रखें, द्वेष ईर्ष्या तथा लोभ को त्याग दें, वातावरण शुद्ध हो जायेगा, देश सुधर जायेंगे, विश्व में अपने आप शान्ति हो जायेगी। मैंने आपको चेतावनी दे दी है। बच सकते हो तो बचो। मेरा काम तो पुकार करना ही है।

जगत का कल्याण सन्तों और सच्चे साधुओं के हाथ में है। परन्तु सार ज्ञान की नासमझी के कारण साधुओं तथा सन्तों ने भी साधू और सन्त के असली रूप को नहीं समझा। क्या ही अच्छा होता कि उन्होंने अपने निज रूप को समझ कर अपने कर्त्तव्य का पालन किया होता। मैंने अपने अनुभव के आधार पर क्या समझा ? यह समझा कि मेरा अस्तित्व एक तत्व है, जो शब्द और प्रकाश में प्रगट होता है। केवल मेरा ही नहीं, अपितु सभी जीवों का अस्तित्व शब्द और प्रकाश स्वरूप है। जीव जब अपने ही प्रतिबिम्ब, छाया या माया, जो कि स्थूल प्रकृति है, उसमें माता है, तो उसके मेल से मनन, चिन्तन, बुद्धिमता और अहं की भावना

पैदा हो जाती है। इस युग में मानव जाति के दिमाग ऐसे नहीं कि इस बात को समझें। सम्भव है, जब दुष्परिणाम अधिक प्रगट हों, तब लोग इस ओर ध्यान दें। छोटी मोटी बीमारी की मनुष्य परवाह नहीं करता, परन्तु जब वह बीमारी बढ़ जाती है, तो वह उसकी ओर ध्यान देता है। इसलिए मैंने जो कहा है कि चुनाव प्रणाली को बदल कर योग्य, दिमाग वाले तथा सदाचारी लोगों का चुनाव करके शासन में लाया जाय, उसको इस समय लोग नहीं मानेंगे। मैं बार 2 आप से यह कह रहा हूं कि अच्छे 2 लोगों की मिली जुली सरकार ही बेहतर होगी। मैं देशभक्त होने के नाते अपनी राय दे रहा हूं। यह मेरा कर्त्तव्य है। यह मिली जुली सरकार भी एक अस्थायी इलाज है, स्थाई नहीं।

स्थायी इलाज तो आटो डैमोक्रेसी है, मगर इस ओर लोग अभी नहीं आयेंगे, बहुत कष्ट उठाने के बाद ही आयेंगे। कृष्ण जी ने अर्जुन को जो विराटरूप दिखाया था गीता में वर्णित उपदेश देते समय, उसकी भ्रान्तियों को दूर करने के लिए ही दिखाया था उसके विश्वास को पक्का करने के लिए ही दिखाया था। अब लोग यदि कर्म, ज्ञान, योग आदि के सूक्ष्म विचारों को नहीं समझ पाते, तो मोटी बात को समझ लें। जब कौरव और पाण्डव युवावस्था में एक ही गुरु से शिक्षा पाते थे तथा शस्त्र विद्या आदि खेलों को मिलकर खेला करते थे, उस समय वह एक दूसरे से द्वेष रखते थे, एक दूसरे से घृणा करते थे। बचपन से ही कौरवों तथा पाण्डवों में ईर्ष्या द्वेष मौजूद था। वह द्वेष और घृणा की अग्नि दोनों के मन में सुलगती रही और समय आने पर

वह वम के रूप में प्रगट हुई। इस समय देश में फैली हुई पार्टियों जनसंघ, प्रजासोशलिस्ट, कांग्रेस, अकाली, कम्यूनिस्ट आदि में जो द्वेषभाव है, ठीक वैसा ही वातावरण है जो महाभारत में कौरवों तथा पान्डवों के विचारों द्वारा हो रहा था। जो परिणाम उस समय कौरवों तथा पाण्डवों का हुआ था वही परिणाम भारत की पार्टियों का होगा। यह प्रकृति का नियम है कि मनुष्य के ऊपर दूसरे मनुष्यों का प्रभाव पड़ता रहता है। यह प्रभाव देखने, सुनने तथा स्पर्श करने से मन के ऊपर पड़ते रहते हैं और मन उन प्रभावों से प्रभावित हो कर वैसा ही व्यवहार करता है। इस समय देश में जितनी भी अशान्ति है उसका मूल कारण बाहरी प्रभाव ही है। वातावरण यदि एकता, प्रेम और शान्ति का हो, तो लोगों के दिलों में सुखदायी हालत पैदा होगी, नहीं तो विपरीत हालत होगी। समाचारपत्रों द्वारा जो गलत-नुक्ताचीनी, एक दूसरे पर दोषारोपण अथवा अनुचित खण्डन फैलता है, वह जनता के दिल तथा दिमागों पर प्रभाव डालता है, परिवर्तन लाता है। एक दूसरे के विरुद्ध दूसरों के ऐब देखने में सहायता करता है। यदि इन गलत प्रोपेगेण्डा करने वाले समाचारों के ऊपर रोक थाम हो जाये, तो देश का सुधार हो सकता है। परन्तु कानून तो यह कहता है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार प्रगट करने की स्वतन्त्रता है, अधिकार है। परन्तु वह अधिकार या स्वतन्त्रता कैसी कि जिसमें एक दूसरे की बुराई करके अपना स्वार्थ सिद्ध किया जाए।

इसका इलाज कर्म या सम्प्रदायों के नियमों के गलन से हो सकता है, क्योंकि सभी धर्मों या सिद्धान्तों के मूल सिद्धान्त एक ही हैं और कोई भी धर्म या सम्प्रदाय एक दूसरे

से द्वेष तथा घृणा करने का उपदेश नहीं देता। हर एक पार्टी, सम्प्रदाय और पन्थ के नेता अपनी-अपनी पार्टियों और अनुयायियों को एक दूसरे के विरुद्ध ग़लत तथा गुमराह होने का संस्कार भरते रहते हैं। फिर वह संस्कार जायेंगे कहाँ। इसलिए मैंने कर्मभोग वश या मौज के आधीन "मनुष्य बनो" की आवाज़ उठाई है और मनुष्यता के नियमों या सिद्धान्तों का प्रचार किया है। चुनाव आ रहे हैं। पिछले चुनावों में क्या हुआ, अब क्या होगा? सब जानते हैं। इस समय कांग्रेस का साधारणतया विरोध होता है। हम लोग गुणग्राही नहीं हैं। जो कांग्रेस ने अच्छे काम किए हैं उनका उल्लेख कभी नहीं करते। बस दोष ही दोष निकालते रहते हैं। हम दोषदर्शी हैं। यही हालत दूसरी पार्टियों की है मेरे विचार में यदि कांग्रेस को बहुमत भी प्राप्त हो जाय तो भी उसे चाहिए कि वह योग्य, सदाचारी तथा अच्छे लोगों को, चाहे वे किसी भी पार्टी के क्यों न हों अपने मन्त्री मण्डल में लेकर उनका लाभ उठायें। चीन को यूनाइटिड एसेम्बली में बहुत से राष्ट्रों के प्रयत्न करने पर भी आज तक भी शामिल नहीं किया गया, क्योंकि उसका कारण केवल अमरीका है। अब भी समझदार वर्ग चीन को शामिल कराने का प्रयत्न कर रहा है। यदि पहले ही उसको शामिल कर लिया जाता, तो शायद कुछ लाभ होता। देश की बेहतरी सभी के हाथ में है, किसी एक पार्टी का अकेला काम कभी लाभदायक नहीं होगा।

इसके अतिरिक्त यदि सब पार्टियों की मिली जुली सरकार होगी, तो विरोधी पार्टियों की ओर, जो व्यर्थ की नवताचीनी होती है, उसमें कमी आ जायेगी। शासन का मद, धन का मद, शक्ति का मद मनुष्य को समता की अवस्था में

या सही दिमाग़ वाला नहीं रहने देता।

शासन का कर्त्तव्य

हकूमत का उद्देश्य या लक्ष्य वास्तव में, मानव जीवन को शारीरिक चेतन्यताओं को विकसित करने और खेलने का अवसर तथा सहायता करने का है। मनुष्य का जीवन केवल देह तक ही सीमित नहीं है। इसलिए यदि कोई शासन जो केवल शारीरिक अर्थात स्थूल (material) पदार्थों की उन्नति तथा विकास तक ही सीमित है, मनुष्य को सुख, शान्ति और आनन्द नहीं दे सकता। इसलिए हकूमत और मज़हब या धर्म, जब तक एक न होंगे, देश में शान्ति का आना सम्भव नहीं है। ये शब्द मेरे सत्‌ज्ञान प्राप्त होने के बाद ही मेरी जुबान से निकल रहे हैं। अब सवाल यह है कि वह मज़हब या धर्म क्या है, जो शासन में आना चाहिए। वे नियम वे सिद्धान्त,वे कर्म जिन पर चलने से मनुष्य मानसिक और आत्मिक रूप से प्रसन्न रह सके क्या हो सकता है ?

मैंने सन्त कृपाल सिंह जी को कहा था कि शिक्षा की प्रणाली को बदल देना चाहिए। संसार में जीवन व्यतीत करने के लिए क्या करना चाहिए ? मेरे विचार में न हिन्दू धर्म का प्रचार हो, न इस्लाम का, न बुद्ध, जैन का, न सिक्ख, न ईसाई धर्म का, किन्तु केवल उन्हीं विचारों का प्रचार करना चाहिए, जिनका मनन करने और जिन पर क्रियात्मक होने से, मनुष्य शारीरिक दृष्टिकोण के अतिरिक्त मानसिक तथा आत्मिक रूप से प्रसन्न रह सके। हकूमत में ऐसे ही लोगों का संगठन होना चाहिए, जो मानसिक व आत्मिक मनोविज्ञान को समझते हों। जब तक ऐसी

स्वयथा न होगी देश में कभी भी शान्ति नहीं हो सकती, न मानसिक शान्ति और न ही शारीरिक शान्ति और न ही आत्मिक शान्ति। स्थूल या भौतिक पदार्थों की चाहे जितनो भी आप उन्नति करो, वह उन्नति कभी भी आपके मन को शान्ति नहीं देंगी।

मैं चाहता हूँ कि सन्तमत के जितने भी दायरे, मण्डल या शाखायें हैं, सब के सब एक प्लेटफार्म पर आयें। सन्तमत से मेरा अभिप्राय वर्तमान राधास्वामी मत, कबीर मत, नानक मत आदि तक ही सीमित नहीं है। यों तो हर सम्प्रदाय में सन्त होते हैं, किन्तु असली सन्त वह है जो शब्द और प्रकाश में रहता है। सन्त वह है जो परमतत्व, अकाल, निज स्वरूप, जो समस्त रचना तथा ब्रह्माण्डी लोकों का आधार है, उसका अनुभव रखता है, ऐसे अनुभवी महानुभाव शासन में आने चाहिए। मुझे याद है जब मैं कंडिया स्टेशन पर असिस्टैन्ट स्टेशन मास्टर था, तो एक बार मैं विश्राम घर के अन्दर गया। वहाँ एक खानसामा ने कुछ कबूतर पाले हुए थे। मैंने वहां देखा कि दो बिल्लियां फर्श पर लेटी हुई थीं और चार कबूतर उन बिल्लियों पर बैठे घूं 2 कर रहे थे, नाच रहे थे। बिल्ली और कबूतर का कुदरती बैर होता है, परन्त वहां तो वह इकट्ठे खेल रहे थे। क्योंकि उन कबूतरों और बिल्लियों को पूरा विश्वास था कि उनका मालिक एक ही है। आज तो सन्त भी एक दूसरे से ईर्ष्या करते हैं एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय के विरुद्ध प्रोपेगैण्डा करता है, आप ही सोचो क्या वे एक मालिक को मानने वाले हैं? यदि मानते होगे तो वे ऐसे घृणित कार्य करते? वह मालिक-सब का मालिक, इस विश्व का ही

मालिक नहीं, अपितु ब्रह्माण्डों का मालिक भी है। उसे कोई राम कहता है, तो कोई अल्लाह, तो कोई राधास्वामी। वह मालिक जो न जन्मता है, न मरता है, न आता है, न जाता है। जब तक मनुष्य ऐसे मालिक को अपना आदर्श नहीं बनाता, वह न तो इस संसार में सुखी रह सकता है, न ही जन्म मरण के बन्धन से मुक्त हो सकता है। सृष्टि में सबसे श्रेष्ठ मनुष्य ही है। जब तक उस दिखने वाले भगवान मनुष्य को हम मनुष्य समझ कर, उसकी सेवा नहीं करते, उसके दुःख दर्द दूर करने की कोशिश नहीं करते, उसे सुख देने का पूर्ण रूप से लक्ष्य नहीं बनाते, हम लाख देश भक्ति की डींग मारें, लड़ाईयां और अशान्ति समाप्त हो ही नहीं सकतीं। लाख कांग्रेस तथा अन्य कोई पार्टी कोई भी प्रयत्न क्यों न करे, शान्ति स्थापित हो ही नहीं सकती। आदर्श देने वाले केवल सन्त महात्मा ही होते हैं। जब तक सन्तमत या पूर्ण पुरुषों की शिक्षा नहीं फैलती तब तक सामाजिक तथा राजनैतिक लाईन में शान्ति स्थापित हो ही नहीं सकती।

भौतिक उन्नति जितनी हो रही है, अत्यन्त सराहनीय है, परन्तु मनुष्य की मानसिक और आत्मिक अवस्था अत्यन्त बिगड़ चुकी है, यह सभी महसूस करते हैं। इस समय देश में चारों ओर अशान्ति फैली हुई है। कांग्रेस के विरुद्ध आवाज़ उठाई जा रही है। यदि कांग्रेस चली भी जाय और उसकी जगह कोई दूसरी पार्टी शासन की बागडोर सम्भाल भी ले, तो उसको भी वही दशा होगी। सम्भव है इससे भी बुरी दशा हो, क्योंकि जन साधारण को मन की शक्तियों, मन के रूप का अथवा मन के विस्तार का ज्ञान नहीं

है। संकल्प ही असली जड़ है। इसलिए इस समय आवश्यकता इस बात की है कि लीडरों तथा पब्लिक के विचार को शिव संकल्पमस्तु के सिद्धान्त की ओर लाया जाय और अच्छी सन्तान पैदा करने की ओर ध्यान दिया जाए। जब अच्छी फ़सल, अच्छे पशु तथा अच्छे औज़ार आदि बनाने का प्रयत्न किया जाता है, क्या यह हकूमत तथा देश के पथ प्रदर्शकों का यह कर्त्तव्य नहीं कि वह लोगों को अच्छी सन्तान पैदा करने और सन्तान को शुभ संस्कार या शुभ विचार देने की ओर ध्यान दें। अच्छी भावी सन्तान ही विश्व में शान्ति ला सकती है।

हकूमत में जो मन्त्री आदि चुने जाते हैं, वे ऐसे होने चाहिएं कि जो काम उनके सुपुर्द किया जाए, उसके वे स्वयं उसमें निपुणता रखते हों। विशेषज्ञ हों। जैसे शिक्षा मन्त्री उसको बनाना चाहिए जो शिक्षा-शास्त्री हो, या कोई वाइस चान्सलर आदि हो। रेलवे मन्त्री कोई उच्चकोटि का रिटायर्ड रेलवे का अफसर हो। इसी प्रकार, प्रत्येक विभाग में मन्त्री ऐसे होने चाहियें, जिनका जीवन इस काम में निपुणता में बीता हो। ऐसी शासन प्रणाली ही देश में शान्ति, सुख और स्मृद्धि ला सकती है, देश में शान्ति ला सकती है।

धार्मिक विचारों वाले अधिकतर लोग भावुक होते हैं और भावुकता में बह कर, वे दूसरों को भी अपने जैसा बनाना चाहते हैं। यह भावनायें ही जीवन हैं, मगर भावनाओं के जगत् में यदि कोई सच्चा पथ प्रदर्शक नहीं मिलता और मनुष्य उसकी आज्ञा में नहीं रहता, ये भावनायें लाभ की जगह हानि पहुंचाती हैं। यह रक्त पात, धार्मिक

झगड़े इन भावनाओं के कारण ही होते हैं। इसलिए देश के लोगों को किसी ज़िन्दा शान्त पुरुष की हिदायत पर चलना परम आवश्यक है। इसलिए ही तो मैं बार 2 कहता हूं कि देश की बागडोर किसी पूरन पुरुष की हिदायत के आधीन होनी चाहिए। प्रत्येक महकमें की कार्यवाही उस महकमें के किसी विशेषज्ञ के अनुसार ही होनी चाहिए। चुनाव में केवल वे लोग हों, जो योग्य हों और मानवता के सिद्धान्तों पर चलने वाले हों।

नोट :---1981 में अमेरिका में अपना चोला छोड़ने के कुछ दिन पहले परम दयाल जी महाराज ने अपने परम प्रिय शिष्य अपने उत्तराधिकारी हजूर मानव दयाल डा. ईश्वर चन्द्र शर्मा को मर्सी हस्पताल में यह शब्द कहे थे, "मेरे प्यारे मानव मैं देख रहा हूं कि इस शताब्दी के अन्त में दुनिया में बहुत बड़ी तबाही आयेगी। भूकम्प, बाढ़ें, प्रकृति का कोप दुनिया की आधी आबादी को समाप्त कर देगा। भारत भी इस भयंकर कोप से नहीं बच सकेगा। इस बर्बादी के बाद ही मानवता धर्म सच्चे मानवता धर्म की स्थापना होगी और विश्व में शान्ति स्थापित होगी, इससे पहले नहीं।"

ॐ

मीमांसा में चार पुरुषार्थों का महत्व

परमसन्त हजूर मानव दयाल जी महाराज

(डा. ईश्वर चन्द्र शर्मा)

मीमांसा में कर्तव्य के लिए कर्तव्य पालन करने पर जो बल दियागया है,उसका उद्देश्य मानवीय व्यक्तित्व के आध्यात्मिक तथा बौद्धिक अंगों में समन्वय लाने की दृष्टि से जीवन के व्यवहार अथवा वर्त्तन में पुनः निष्ठा उत्पन्न करना है। मीमांसा के उद्देश्य की व्याख्या करते हुए पण्डित मोती लाल जी शास्त्री ने कहा है, "वर्तन अथवा जीवन के व्यवहार को आचरण अथवा कर्म से सम्बन्धित किया गया है। नैतिकता को व्यवहारिक जीवन पर लागू करने की क्रियात्मक प्रवृत्ति उस व्यक्ति के शारीरिक स्वभाव पर निर्भर करती है जो शरीर, मन और बुद्धि का समन्वय है। भौतिक शरीर में ज्ञानेन्द्रियाँ, मन तथा बुद्धि उपस्थित हैं और इन सभी का अस्तित्व ज्ञव्यवहार के वर्त्तन का आधार है। भारतीय दृष्टि

से यथार्थ व्यवहार का अर्थ वह विषय वर्त्तन है, जो उस मानव की नैतिक क्रिया से सम्बन्धित है, जो कि शरीर, ज्ञानेन्द्रियों, मन और बुद्धि के समन्वय की दृष्टि से देश-कालिक प्राणी है और वही मानव केन्द्ररथ रूप आत्मा के कारण अलौकिक एवं विश्वातीत प्राणी है। मानव का आध्यात्मिक अंग उसे समदर्शन का ज्ञाता बनाता है और वही मान शरीर, मन, बुद्धि तथा आत्मा का समन्वय होने कारण विषम वर्त्तन को अपनाता है।"

मीमांसा दर्शन की यह व्याख्या निस्सन्देह, इस सिद्धान्त के आशय के अनुसार अत्यन्त प्रभावशाली है। मीमाँसा दर्शन जो प्रत्येक व्यक्ति को वेदों के कर्मकाण्ड पर चलने का आदेश देता है और कर्म-काण्ड को 'कर्तव्य के लिए कर्तव्य' घोषित करता है, इस बात को स्वीकार करता है कि वर्णाश्रम धर्म प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। आलोचनात्मक दृष्टि को प्रधानता के कारण और नास्तिक दर्शनों के द्वारा संन्यास-वाद पर अधिक बल दिए जाने के कारण, मीमांसा के लिए आवश्यक था कि धर्म के मूल्य अथवा नैतिक कर्तव्य पर अधिक बल दे और वैदिक दर्शन के महत्व को पुनः स्पष्ट करे।

लौकिक प्रगति के लिए भी, मीमांसा नैतिकता को आवश्यक मानता है। मीमांसा यह विधान करता है कि धर्म चेतन व अचेतन रूप से व्यवहार तथा रुचि को समन्धित करता है। यह व्यक्ति तथा समाज के नैतिक जीवन की प्रगति के लिए हमारा ध्यान अर्थ तथा काम की ओर, मोक्ष प्राप्ति के लिए धर्माचरण की ओर आकर्षित करता है।

पहले दो पुरुषार्थों का उद्देश्य सामाजिक कल्याण और अभ्युदय के लिए है और पिछले दो का आध्यात्मिक कल्याण के लिए। मोक्ष उच्चतम पुरुषार्थ है, जिसकी पराकाष्ठा श्रेयस् हैं श्रेयस् और अभ्युदय दोनों विभिन्न होते हुए भी अन्योन्याश्रित हैं।

मीमांसा आचार में सामान्य नैतिकता का विरोध नहीं किया गया, अपितु उसे मोक्ष के साधन आध्यात्मिक धर्म की तुलना में गौण माना गया है। मीमांसा आचार शास्त्र के इस अंग पर आलोचना करते हुए हिरियाना ने कहा है, "शंकर कहता है कि पियाऊ लगवाने जैसे दाक्षिण्यता के कर्म यद्यपि परमार्थ और शुभ के लिए होते हैं, तथापि वे धर्म नहीं हैं। इसका अर्थ यह है कि मीमांसा, व्यवहार को उपयोगिना-वादी मापदण्ड से आंकता है, किन्तु वह स्वार्थवादी दृष्टिकोण नहीं रखता जैसे कि शंकर द्वारा दिए गए उदाहरण से स्पष्ट है कि यह व्यवहार मानव के सामाजिक स्वरूप की अनुभूति पर आधारित है।" प्राय: अधिकतर आलोचक यह भूल जाते हैं कि जब मीमांसा यज्ञ आदि को धर्म के रूप में, नित्य कर्मों को धर्म कहता है और जुआ खेलने तथा हत्या इत्यादि कर्मों को निषिद्ध और अधर्म स्वीकार करता है और ये कर्म, कर्मों की अदृश्य शक्ति के फल माने जाते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि मीमांसा के आचार शास्त्र में आध्यात्मिक तथा सामाजिक कल्याण दोनों को उचित पद दिया गया है। यदि यज्ञ आदि नित्य कर्मों का करना मोक्ष का साधन है तो निषिद्ध कर्मों का करना आध्यात्मिक प्रगति के मार्ग में बाधक माना गया है। यह समझना एक भारी भूल है कि सामाजिक नैतिकता और आध्यात्मिक नैतिकता के क्षेत्र भिन्न-भिन्न हैं। कम से कम भारतीय दर्शन में और विशेषकर मीमांसा

आचार शास्त्र में वे दोनों घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। अर्थ और काम की अनुभूति के लिए व्यक्ति को सामाजिक क्षेत्र से प्रेरणा प्राप्त करनी चाहिए और धर्म तथा मोक्ष की अनुभूति के लिए वेदों के अनन्त ज्ञान से। वेद, व्यक्ति, समाज तथा आत्मा के समन्वित कल्याण का समर्थन करते हैं। मानव तथा विश्व के शरीर विषयक स्वरूप पर बल देते हुए, अर्थ, काम, धर्म तथा मोक्ष ऐसे चार पुरुषार्थों की विधि की गई है, जिनका सम्बन्ध शरीर, मन, बुद्धि तथा आत्मा से है। अब चारों पुरुषार्थों की संक्षिप्त व्याख्या की जाएगी।

अर्थ :—

आर्थिक संस्कृति और वाणिज्य सभ्यता के इस समकालीन युग में, जिसमें जीवन की अपेक्षा मुद्रा, और नैतिक कर्त्तव्य की अपेक्षा आर्थिक उद्देश्यों को श्रेष्ठ समझा जाता है, मानवीय जीवन के आर्थिक अंग का महत्व चरम सीमा पर पहुंच गया है। भारतीय दर्शन में व्यक्ति तथा समाज के लिए अर्थ को एक आवश्यक निमित्त मूल्य माना गया है। पश्चिमीय तथा भारतीय अर्थ की धारणाओं में अन्तर इस बात का है कि जहां पश्चिम ने अर्थ को केवल काम की तृप्ति साधन माना है, वहां भारत ने यह प्रतिपादित किया है कि अर्थ केवल काम की तृप्ति का ही साधन नहीं, अपितु नैतिकता एवं धर्म की प्राप्ति के लिए भी समान रूप से आवश्यक है। अर्थ सांसारिक सुख तथा आध्यात्मिक आनन्द का कारण है। ब्रह्मचर्य आश्रम जो विद्याध्ययन के लिए आवश्यक है, वास्तव में अर्थ प्राप्ति की क्षमता सम्पादन

के लिए एक शिक्षण की व्यवस्था है। इसमें सन्देह नहीं कि भारत ने अर्थ के नैतिक और आध्यात्मिक उपयोग पर बल दिया है, किन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं कि भारतीय दर्शन भौतिक विकास की अवहेलना करता है और केवल पारलौकिक और काल्पनिक उपयोग की ओर ध्यान देकर मूल्य की व्यवहारिक और आर्थिक उपयोगिता को कोसता है। इसके विपरीत, अर्थ को वांछनीय और व्यवहारिक दृष्टि से प्रशंसनीय सम्मान तथा सुविधाएं देने वाला पुरुषार्थ माना गया है। अर्थ के संदर्भ में संस्कृत के एक श्लोक में कहा गया है :-"धन एक मानव को निम्न सामाजिक स्थिति से उच्च सामाजिक स्थिति तक पहुंचाता है। मानव धन के माध्यम से सब कठिनाइयों को पार कर सकता है। धन से श्रेष्ठ कोई बन्धु या साथी नहीं है। अतः धन का संचय करो।" भारतीय दर्शन के क्षेत्र में, साधारण बुद्धि पर आधारित नैतिकता का और धन के उपयोग की स्वीकृति का अभाव नहीं है, जैसे कि अनेक पश्चिमीय विद्वान और दार्शनिक भूल से समझते हैं। इसके विपरीत, भारतीय कवियों तथा लेखकों ने जन साधारण को आर्थिक स्थिति दृढ़ बनाने की प्रेरणा देने के लिए धन को प्रशंसा की है। इस दृष्टिकोण की पुष्टि निम्नलिखित द्वारा की जा सकती है :--

यस्यास्तिवित्तं स नरः कुलीनः,
स पण्डितः श्रुतवान् गुणज्ञः।
स एवं वक्ता स च दर्शनीयः,
सर्वे गुणः कांचनम् आश्रयन्ति॥

अर्थात "जिस व्यक्ति के पास धन है, वही कुलीन माना

जाता है, वही विद्वान, वही शास्त्र का जानने वाला है, वही सर्वगुण सम्पन्न है, वही वक्ता है, वही सुन्दर है। सभी गुण स्वर्ण पर आधारित हैं।"

अर्थ का प्राथमिक उद्देश्य शरीर का विकास है। पौष्टिक भोजन उस समय ही प्राप्त हो सकता है, जब किसी व्यक्ति की आर्थिक स्थिति अच्छी हो। शरीर के स्वास्थ्य को बनाए रखना बहुत आवश्यक है। शरीर ही ईश्वर का यथार्थ मन्दिर है और व्यक्ति के मानसिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक व्यक्तित्व का वाहन है। महाकवि कालिदास ने अपनी अमरकृति 'कुमार सम्भव' में सुन्दर शब्दों में कहा है, "शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम्"। इसी दृष्टि से ही मीमांस दर्शन वेदों की भांति अर्थ को एक निमित्त मूल्य मानता है। जब अर्थ को निमित्त न मान कर स्वलक्ष्य मान लिया जाता है और उसे भोग विलास के लिए ही प्राप्त किया जाता है, उस समय ही व्यक्ति, सुख दुःख तथा पुनर्जन्म के चक्कर में आता है। अतः अर्थ जो कि पुरुषार्थों में एक श्रेष्ठ पुरुषार्थ है, उसकी न तो अवहेलना करनी चाहिए और न ही उसे स्वलक्ष्य मानना चाहिए।

काम अथवा प्रेम :--

काम अथवा प्रेम का पुरुषार्थ, मानसिक तुष्टि है। इसका सम्बन्ध मानवीय व्यक्तित्व के दूसरे स्तर मन से है। काम को आधारभूत मूल्यों में से एक स्वीकार किया गया है और काम को मूल प्रवृत्ति की तृप्ति को अनिवार्य समझा गया है। प्राचीन भारतीय ऋषियों ने बहुत पहले ही इस

तथ्य को स्वीकार कर लिया था कि काम वृत्ति के दमन से मानसिक असन्तुलन और व्यक्तित्व का विनाश होता है।

यही कारण है कि विवाह के द्वारा काम वृत्ति की तृप्ति को न केवल उचित माना गया है, अपितु, व्यक्ति और समाज की प्रगति के लिए अनिवार्य माना गया है। यह कहा गया है कि जिस व्यक्ति का विवाह नहीं होता, उसमें मानसिक त्रुटि है। मनु ने कहा है कि जब तक मनुष्य विवाह नहीं करता, वह अर्द्ध है।

भारतीय दर्शन में काम को पाप नहीं माना गया, अपितु इसे आत्मा से समन्वित किया गया है और पवित्र माना गया है। कोई कारण नहीं कि काम वृत्ति की जो क्रिया एक नवीन जीवन का सृजन करती है, जो ईश्वर का प्रतिबिम्ब है, एक पवित्र कर्म नहीं माना जाए। इस दृष्टिकोण को डा. राधाकृष्णन ने अपनी पुस्तक, "धर्म और समाज' में कहा है, "इसके अतिरिक्त जब काम का अर्थ प्रेम है, एवं स्त्री और पुरुष का परस्पर स्थायीभाव है, इस अवस्था में जीवन से सम्बन्धित काम के पुरुषार्थ का मूल्य और भी अधिक हो जाता है।" सामान्यतया भारतीय दर्शन में तथा विशेषतया मीमाँसा में दाम्पत्य रति का विशेष महत्व है। प्रेम निस्सन्देह मन की सामग्री है, किन्तु यह मन से उत्पन्न होकर बुद्धि और आत्मा से भी सम्बन्धित है। प्रेम की व्याख्या मीमांसा के दृष्टिकोण से करना आवश्यक है।

यदि मन को एक पात्र मान लिया जाए और प्रेम को

उस पात्र में भरा तरल, तो उस तरल में तीन प्रकार की तरंगें उठ सकती हैं। जब वायु के कारण तरंगनीचे से ऊपर की ओर उठती है,तो प्रेम की ऐसी अवस्था श्रद्धा कहलाती है। श्रद्धा छोटे व्यक्ति का वयोवृद्ध व्यक्ति के प्रति, या न्यून स्तर वाले व्यक्ति का उच्च स्तर वाले व्यक्ति के प्रति प्रेम होता है। इस प्रकार का प्रेम पुत्र या पुत्री का अपने माता पिता के प्रति, अथवा शिष्य का अपने गुरु के प्रति होता है। जब वायु की तरंग ऊपर से नीचे की ओर आती है, इस प्रकार की अवस्था में प्रेम वात्सल्य कहलाती है। माता पिता का अपने शिशु के प्रति, अथवा गुरु का अपने शिष्य के प्रति प्रेम वात्सल्य रूपी प्रेम होता है। तीसरी तरंग में जब जब तरल एक ही स्तर पर रहता है तो ऐसा प्रेम स्नेह कहलाता है जो कि बराबर वाले यानो कि मित्र के प्रति होता है। भारतीय दृष्टिकोण से विवाह भागीदारी नहीं है और न ही वह दो मित्रों के बीच किसी प्रकार का समझौता है। वह पति पत्नी के बीच में केवल ऐसा क्राम सम्बन्धी आदान प्रदान मात्र भी नहीं है, जिसमें कि पति-पत्नी को कुछ भागीदारी के अधिकार प्राप्त हों। इसके विपरीत, विवाह का अर्थ दो आत्माओं का ऐसा आध्यात्मिक सम्बन्ध है जो कुछ वर्षो के लिए,अथवा एक जीवन के लिए ही नहीं, अपितु जन्म जन्मान्तर तक बना रहता है। पति-पत्नी के प्रेम को दाम्पत्य रति कहते हैं, जिसका अर्थ न ही केवल श्रद्धा है, न केवल वात्सल्य, न केवल स्नेह है, अपितु इन तीनों प्रकार के प्रेम का समन्वय है। दोनों का प्रेम कभी तो एक दूसरे के प्रति श्रद्धा में अभिव्यक्त होता है, कभी वात्सल्य और कभी स्नेह में। पति पत्नी एक दूसरे की प्रेम

से परिचर्या भी करते हैं और बीमारी के समय वात्सल्य भी प्रकट करते हैं और एक दूसरे से मित्रों की भाँति स्नेह भी करते हैं। मनु ने कहा है कि पति को भी पत्नी के प्रति वैसी ही श्रद्धा रखनी चाहिए जैसा कि पत्नी को पति के प्रति। पति पत्नी के प्रेम श्रद्धा, विश्वास, निष्ठा, आत्म समर्पण तथा आत्मानुभूति सभी होते हैं।

विवाहित पति पत्नी को शिव तथा शक्ति अथवा ईश्वर तथा उसकी रचनात्मक शक्ति के अनन्त जोड़े का प्रतीक माना गया है। विवाहित जीवन में अनुभूत प्रेम तथा काम व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद होने के साथ-साथ ईश्वर के प्रति दिव्य प्रेम का भी प्रदर्शन है। यदि यह कथन, "ईश्वर प्रेम है और प्रेम ईश्वर हैं" सत्य है तो यह भी सत्य है कि मानव से प्रेम करना ईश्वर से प्रेम करना है। जिस व्यक्ति ने मानवीय प्रेम का कभी अनुभव नहीं किया, जिसने अपने स्वार्थ का अपने जीवन के साथी के हित के लिए कभी त्याग नहीं किया, वह न तो कभी ईश्वर से प्रेम कर सकता है, और न ही मोक्ष प्राप्त कर सकता है। इस दृष्टि से ही पुरुषार्थ के रूप में काम अथवा प्रेम मानवीय व्यक्तित्व के मानसिक अंग के लिए तुष्टि का साधन होने के साथ साथ जीवन के परमलक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति का भी साधन है।

धर्म अथवा नैतिक कर्तव्य :---

यदि अर्थ और काम मुख्यतया शरीर और मन के विकास से सम्बधित हैं, तो धर्म अथवा नैतिक कर्तव्य व्यक्ति तथा समाज के बौद्धिक विकास से। यह नहीं भूलना चाहिए कि भारतीय दर्शन में धर्म की धारणा प्राचीनतम है। इसका उद्भव उस 'ऋत' के आकार में वैदिक काल से हुआ जिसे देवताओं द्वारा धारण किया गया नैतिक नियम माना जाता है। मीमांसा के अनुसार, धर्म न ही केवल वेदों में प्रतिपादित सत्कर्म है अपितु इसका अर्थ वह शक्ति भी है, जिसमें सत्कर्म का फल निहित है और जिसे अपूर्व कहा गया है।

मीमांसा दर्शन धर्म को 'कर्तव्य के लिए कर्त्तव्य' मानता है,किन्तु उसका कर्तव्य के लिए कर्तव्य कान्ट के निरपेक्ष आदेशवाद की भांति अमूर्त नहीं है। वह प्रेरिकहीन नहीं, क्योंकि वह इस बात को अभिव्यक्त करता है कि यद्यपि नैतिक दृष्टिकोण निरपेक्ष रूप से स्वीकार करने योग्य है, तथापि उसका उद्देश्य मानवीय व्यक्तित्व का समन्वित विकास है और वह अन्ततोगत्वा व्यक्ति को मोक्ष की ओर अग्रसर करता है। इस प्रकार मीमांसा का वेदों पर निर्धारित निरपेक्ष आदेश कान्ट के अमूर्त कर्तव्य के लिए कर्तव्य' से भिन्न है।

धर्म अथवा शुभ कर्म न ही केवल वेदों द्वारा निर्दिष्ट किया गया है अपितु स्मृति ग्रन्थ भी धर्म का विधान करते हैं। किन्तु स्मृति में प्रस्तुत धर्म सम्बन्धी आदेश सदैव संगत नहीं होते। इसलिए वेदों के दृष्टिकोण को निरपेक्ष स्वीकार करना चाहिए यद्यपि मीमांसा के अनुसार, उत्कृष्ट धर्म वेदों से प्राप्त होता है, तथापि स्मृति का निर्देश

तथा सत्पुरुषों और शुभ संस्थाओं के उदाहरणों को भी मीमासकों ने कर्तव्य का आधार माना है। वास्तव में इस सिद्धान्त के द्वारा प्रस्तुत धर्म की धारणा हिन्दू-दर्शन में आधारभूत धारणा है और उसका आज भी करोड़ों हिन्दू अनुसरण करते हैं। मीमांसा के आधार पर, धर्म की व्याख्या के महत्व की चर्चा करते हुए डा. राधाकृष्णन ने कहा है, "हिन्दुओं का जीवन, वेदों के नियमों द्वारा इस प्रकार प्रभावित है कि मीमांसा के नियम हिन्दू धर्म शास्त्र की व्याख्या के लिए अत्यन्त महत्त्व रखते हैं।" दुरभाग्य-वश, वेदों तथा स्मृति के बीच की कड़ी, ब्राह्मण साहित्य की विद्वानों द्वारा, अवहेलना के कारण, मीमांसादर्शन के सम्बन्ध में अनेक भ्रांतियां उत्पन्न हो गई हैं। इस तथ्य के होते हुए भी भारतीय दर्शन तथा हिन्दुओं के व्यवहारिक जीवन पर मीमांसा की धार्मिक धारणा का आधिपत्य है।

मोक्ष :---

मीमाँसा दर्शन अन्य सभी भारतीय दर्शनों की भांति मोक्ष अथवा अपवर्ग को मानवीय व्यक्तित्व का परमलक्ष्य स्वीकार करता है और उसे जीवन का एक मात्र उद्देश्य मानता है। ऐतिहासिक दृष्टि से मोक्ष की धारणा निश्चितरूप से प्रभाकर तथा कुमारिल द्वारा स्वीकार की गई थी। ये दोनों विचारक, मीमांसा के प्रभाकर तथा भट्ट मतों के प्रवर्त्तक थे। कुछ व्याख्याकारों का विश्वास है कि मीमांसा के अनुसार, मोक्ष एक ऐसी निषेधात्मक अवस्था है, जिसका अर्थ है सुख तथा दुःख दोनों का लुप्त हो जाना। किन्तु अन्य अलोचकों के अनुसार, मोक्ष निरन्देह अस्तित्व

की ऐसी साक्षात अवस्था है जहाँ पर धर्म तथा अधर्म का अन्त हो जाता है। फिर भी ये दोनों व्याख्यायें एक बात में सहमत हैं और वह यह है कि दोनों मोक्ष को दुःख से पूर्ण निवृत्ति स्वीकार करते हैं। मीमांसा के अनुयायियों ने मोक्ष के विश्वातीत स्वरूप को स्वीकार किया है। उनके अनुसार, मोक्ष के स्तर पर व्यक्ति सुख-दुःख, शीत उष्ण और सत् असत् की सापेक्षताओं से ऊपर उठ जाता है। सांसारिक सुख क्षणिक और सापेक्ष होने के कारण उस समय निरर्थक प्रमाणित हो जाते हैं जब उनकी तुलना मोक्ष की उस शाश्वत और दुःखहीन उस अवस्था से की जाती है, जिसमें सभी कर्मों का क्षय हो जाता है। इस निरपेक्ष अस्तित्व की अवस्था प्राप्त करने की इच्छा सुख तथा दुःख की सापेक्षता से उदित होती है। डा. राधाकृष्णन ने मीमांसकों के इस दृष्टिकोण की व्याख्या करते हुए कहा है, "जब व्यक्ति यह अनुभव करता है कि सांसारिक सुख, दुःख से मिश्रित हैं, तब उसका ध्यान मोक्ष की ओर जाता है। वह निषिद्ध कर्मों तथा उन नित्य कर्मों को त्याग देने की चेष्टा करता है, जिनके द्वारा इस लोक में तथा परलोक में किसी प्रकार का सुख अभिप्रेत होता है। वह संचित कर्मों के क्षय के लिए आवश्यक तप करता है और धीरे-धीरे संतोष तथा संयम से युक्त यथार्थ आत्मज्ञान के द्वारा विधेयमुक्ति प्राप्त करता है।

आध्यात्मिक असन्तोष पर आधारित तथा सांसारिक जीवन के सापेक्ष स्वरूप से प्रेरित, इस मोक्षमार्ग के निराशावाद अथवा पलायनवाद की प्रवृत्तियां नहीं मानना चाहिए।

वेद, वर्णाश्रम धर्मों के आधार पर क्रमिक मोक्ष प्राप्ति का विधान करते हैं और मीमांसा वेदों के आदेशों में बेहद विश्वास रखती है। जब व्यक्ति आत्मा के यथार्थ ज्ञान के द्वारा जीवन्मुक्त हो जाता है, केवल उस समय ही वह देश-कालिक जगत् से ऊपर उठ जाता है, किन्तु वह उसका निषेधन नहीं करता। यथार्थज्ञान की प्राप्ति के बाद भी उसे संचित कर्मों का क्षय करने के लिए निश्चित रूप से देश-कालिक नियमों का पालन करना पड़ता है। आध्यात्मिक सत्ता का एकत्व धर्म के स्तर पर उपस्थित विविधता का अन्त नहीं कर देता। धर्म और बुद्धि के द्वारा निरपेक्षता प्राप्त करने के लिए, व्यक्ति सापेक्षताओं से ऊपर उठ जाता है। विधेयमुक्ति के पश्चात अमरत्व की अवस्था को प्राप्त करना यह सिद्ध करता है कि मीमांसा दर्शन, वेदों की भांति, बहुवादी भौतिकशास्त्र, अद्वैतवादी तत्त्व विज्ञान तथा उपयोगितावादी अस्तित्ववाद प्रतिपादित करता है। इसका कारण यह है कि धर्म व्यक्ति को वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने का आदेश देता है और मोक्ष की धारणा उसे आत्मा के उस स्वाभाविक स्वरूप को प्राप्त करने की प्रेरणा देती है, जिसमें क्षणिक तथा सापेक्ष सुख दुःख के अनुभवों का अन्त हो जाता है। इस अवस्था को वह केवल विज्ञान के द्वारा नहीं, अपितु अपने अन्तस् में स्थित उच्चतम सत्ता के ज्ञान द्वारा ही प्राप्त कर सकता है। सापेक्ष कर्म नहीं, अपितु परमज्ञान ही व्यक्ति को मोक्ष की ओर अग्रसर कर सकता है।

जिस प्रकार, ज्ञान तथा विज्ञान अन्योन्याश्रित और एक दूसरे के पूरक हैं, उसी प्रकार आत्मा के स्वरूप का दर्शन तथा जीवन के विविध क्षेत्रों में धर्माचरण, एक दूसरे के

पूरक हैं। केवल सैद्धान्तिक ज्ञान ही मोक्ष का कारण नहीं है, अपितु परम-सत्ता का वह व्यवहारिक और अन्तर्दृष्यात्मक ज्ञान, जो धीरे-धीरे "धर्म के लिए धर्म" के अभ्यास के द्वारा प्राप्त होता है, और आत्मा के एकत्व की अनुभूति, दोनों मोक्ष के कारण हैं। धर्म हमें वर्णाश्रम धर्मों के अनुसार, कर्मकाण्ड अथवा कर्तव्य करने का आदेश देता है तथा मोक्ष का परमलक्ष्य सभी भौतिक और सामाजिक भेदभावों से ऊपर उठने का। मीमांसा दर्शन ब्रह्म अथवा आध्यात्मिक सत्ता के अद्वैत अस्तित्व के ज्ञान का विरोध नहीं करता और न ही अद्वैतवादी उपासना और कर्म का तिरस्कार करता है। यह तथ्य वेदान्त के आचार-शास्त्रों में स्पष्ट हो जाता है।

मासिक सन्देश

सत्संग परमसन्त सद्गुरु

हजूर मानव दयाल

डा. आई. सी. शर्मा जी महाराज

मेरी अपनी ही आत्मा के अंश,

मेरे परमप्रिय सत्संगियो :

राधास्वामी, परमदयाल जी सहाई।

पिछले मासिक सन्देश में मैंने आपको दशहरे के सत्संग से पहले की सूचना दी थी। यद्यपि हम होशियारपुर से 30 सितम्बर को चले थे, फिर भी हमेशा की भांति दशहरे के सत्संग से पहले मोदीनगर का दौरा इसलिए नहीं हुआ, क्योंकि मेरी पीठ की चोट पूरी तरह से ठ क नहीं हुई थी। मुझे दो प्रकार की पेटियों का प्रयोग करना पड़ता था! काफी दूर तक चलने के लिए डाक्टर के परामर्श से एक विशेष जस्ते की मोटी पेटी प्रयोग करनी पड़ती थी और थोड़े समय के लिए चलने या बैठने के लिए रबर की पेटी का प्रयोग करना पड़ता था। बावजूद इन कठिनाइयों के मुझे दशहरे के सत्संग के लिए दिल्ली अवश्य जाना था और 7 अक्तूबर को

विदेशी दौरे के लिए रवाना होना था। साधारणतया कोई व्यक्ति ऐसी परिस्थितियों में घर के आराम से निकलकर विदेश नहीं जाना चाहेगा। परन्तु मेरी दृष्टि में गुरु की आज्ञा का पालन करना और सत्संगियों की सेवा करना सर्वोपरि है। यही मेरे जीवन का उद्देश्य भी है और यही एक मात्र अपने परम गुरु के उस ऋण को, चुकाने का साधन है, जिस से किसी प्रकार से भी शिष्य मुक्त नहीं हो सकता। सतगुरु ने मुझे जिस अवस्था पर पहुंचा, दिया वह राधास्वामी हालत है, जिस पर पहुंचने के बाद पूर्णता प्राप्त हो जाती है और किसी सांसारिक साधनों की ज़रूरत नहीं रहती। यह अभयदान और मस्ती की हालत ही ब्राह्मी स्थिति कहलाती है। इस अवस्था को प्राप्त करने के बाद, साधक भ्रम मुक्त हो जाता है और शरीर छोड़ते समय इसी अवस्था के कारण उसकी सुरत सीधी परमधाम को प्राप्त करती है। गुरु की ऐसी अपार कृपा एवं ऐसे नामदान का ऋण, सिवाय उसकी आज्ञा का पालन करने के और किसी प्रकार से चुकाया नहीं जा सकता।

जहां तक शरीर की स्वस्थता या अस्वस्थता का सम्बन्ध है, जब अपने आपको मालिक के सुपुर्द कर दिया, तो इस सम्बन्ध में विचार करने की आवश्यकता नहीं है। ऐसा सोचना कि मैं अस्वस्थ हूं, इसलिए मैं घर में ही विश्राम करता रहूं, एक सच्चे शिष्य के लिए अनुचित है। जिस तत्त्वाधार ने हमें जगत् में विशेष उद्देश्य के लिए भेजा है, वह स्वयं ऐसी परिस्थितियां पैदा कर देगा कि हमारा स्वास्थ्य बिगड़े नहीं। जब वह जानता है कि अमुक व्यक्ति से जीवों की सेवा करने का काम लेना है, तो हमारे स्वास्थ्य की चिन्ता उसी को होगी। दातादयाल जी ने अपने एक

शब्द में यही विचार इस प्रकार प्रस्तुत किए है :--

चिन्ता त्याग, त्याग दे चिन्ता
यही है सच्चा ज्ञान री---मेरी सुरत सहेली ।।
जो कुछ होगा मौज से होगा
मौज को परख सुजान री---मेरी सुरत सहेली ।।

यही शरणागत की अवस्था जीव को सुख दुःख, लाभ हानि, जय पराजय, गर्मी सर्दी, निन्दा स्तुति और जीवन मरण के द्वन्दों से ऊपर उठा देती है। इस बात का अनुभव तो मुझे परमदयाल जी के मिलने से पहले भी था, किन्तु उनके सम्पर्क में आने के पश्चात् और उनके एक वाक्य को सुनने के पश्चात् सुरत की पूर्णता और अमरत्व का एवं अविनाशीपने का आभास मुझे 1980 में हुआ, जब परमदयाल जी महाराज ने एकान्त में अपने उच्चतम राधास्वामी अवस्था को अपने सरल शब्दों में मुझे सम्बोधित करते हुए अभिव्यक्त किया। मैंने यह घटना पहले भी मासिक सन्देश में प्रस्तुत की थी, किन्तु यहां पर एक बार फिर आपके उद्बोधन के लिए नीचे लिख देना चाहता हूं।

1980 के दौरे पर परमदयाल जी मेरे घर में मेरे पास क्लीवलैंड अमेरिका में लगातार करीब दो सप्ताह तक रहे। उन्होंने कहा कि वह कहीं भी सत्संग आदि देने के लिए नहीं आए, केवल मुझे ही अपना सान्निध्य देने के लिए आए थे। जब मैंने उनसे यह प्रश्न किया कि उनकी आन्तरिक अवस्था कैसी है, तो उन्होंने मुझे उत्तर देते हुए कहा, "शर्मा ! अब मैं साधन के समय घण्टा, शंख, ॐ,रारंग-

सारंग, सोहम् आदि के शब्दों को नहीं सुनता। मैं सीधा प्रकाश और शब्द में जाता हूं। यद्यपि प्रकाश और शब्दमें विचीन होने से मैं मन से परे चला जाता हूं और कबीर साहिब केनीचे दिए गए शब्द को, अनुभव को समझता हूं, फिर भी मैं इस अवस्था से ऊपर जाने की कोशिश करता हूं।

जाप मरे अपजा मरे,
अनहद् भी मर जाए।
सुरत समानी शब्द में,
वाको काल न खाए॥

मैं अपने उस तत्व को, उस पहलू को, उस निजरूप को जानने की इच्छा से ऊपर जाता हूं, जो प्रकाश को देखता है और शब्द को सुनता है, मैं एक मिनट या दो - तीन मिनट उस हालत का अनुभव करता हूं, जहां मुझे यह होश नहीं होता कि मैं हूं और न यह होश होता है कि मैं नहीं हूं। मुझे ऐसा लगता है कि मैं अपने आपको पूरी तरह से खो बैठा हूं, और मेरी हस्ती समाप्त हो गई है। शर्मा! जब मैं उस हालत से उतर कर वापिस आता हूं तो इससे प्रमाणित होता है कि मेरी व्यक्तिगत हस्ती नष्ट तो नहीं हो गयी थी। यदि नष्ट हो गयी होती तो मैं वापिस कसे आता?"

इन शब्दों को सुन कर मुझे एक दम झटका लगा और मुझे इस बात का अनुभव हुआ कि मेरी असली हस्ती अविनाशी है एवं साक्षी है। यही अभयदान था, जो मुझे परमदयाल जी महाराज ने एक वाक्य से दे दिया। यह जीवन-मुक्ति की अवस्था साधारण अवस्था से ऊंची है।

जीवनमुक्त अवस्था में समदृष्टि होती है और प्रेम व्यापक होता है। किसी श्यक्ति से नफ़रत नहीं होती। किन्तु जो अवस्था परमदयाल जी ने मुझे ऊपर दी गयी घटना में प्रदान की, उसमें इस समदृष्टि के इलावा अपने आप में एक ऐसा दृढ़ और अडिग आत्मविश्वास उत्पन्न हुआ, जिसे बयान नहीं किया जा सकता, किन्तु जिसके आधार पर मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मेरे अविनाशीपने और अनन्तता को संसार की कोई भी परिस्थितियां ठेस नहीं पहुंचा सकतीं। इसी कारण मैं अपने कर्त्तव्य को निभाने के लिए शारीरिक दृष्टि से अस्वस्थता के बावजूद भी दौरे पर निकल पड़ा।

3 दिन तक मैं केवल राजपुर रोड केशव के निवास स्थान पर रहा, किन्तु सत्संगियों के मिलने का तांता बंधा रहा। इन दिनों भी सत्संगियों को परामर्श देते समय अनेक अनुभव हुए, जिनको मैं बाद में, किसी सन्देश में प्रस्तुत करूंगा। 4 अक्तूबर को मैं सालवान स्कूल में पहुंच गया। प्रातःकाल ही सैंकड़ों सत्संगी दूर-2 से आ चुके थे। सायंकाल को दशहरे के सत्संग के सिलसिले में करीब 4 से 6 बजे तक सत्संग आयोजित हुआ। सत्संगियों की संख्या बहुत अधिक थी। सैंकड़ों लोग सत्संग हाल से बाहर खड़े हुए सत्संग सुनते रहे। इस सत्संग में सभी पर मस्ती छा गई और मुझे एक आन्तरिक मौज में वह जाने का अनुभव हुआ। इस सत्संग के पश्चात् हजारों सत्संगी मेरे पास आते रहे। सायंकाल के लंगर के पश्चात् भी प्रेममय विश्वास से ओत-प्रोत भोले-भाले सत्संगी बड़ी श्रद्धा और अगाध प्रेम में सने हुए मुझे मिलने आते थे और बहुत प्रसन्न तथा सन्तुष्ट होकर जाते थे। उनका अपना विश्वास

और उनकी श्रद्धा, उनके सभी काम करती है, किन्तु वे सच्चे दिल से समझते हैं कि मैंने ही उनकी इच्छाओं को पूरा किया है। उनके इस विश्वास से मेरा अगाध प्रेम उमड़ पड़ता है और मैं सच्चे दिल से चाहता हूं कि इन भोले-भाले व्यक्तियों की भक्ति सफल हो।

इन श्रद्धालुओं में से श्री कृष्ण लाल जैन, परमदयाल जी के निकटवर्ती कृपापात्रों में से हैं। इनके सम्बन्ध में मैंने पहले भी कई बार मासिक सन्देश में ज़िक्र किया है। इनकी श्रद्धा और विश्वास का पारावार नहीं है। कृष्णलाल ने मुझे कई बार लिखा कि उन्हें परमदयाल जी के रूप ने चोला छोड़ने के बाद विश्वास दिलाया था कि मानव दयाल में परमदयाल जी की दुगनी शक्ति मौजूद है और उस दिन से कृष्ण लाल के मुताबिक वह मेरा रूप भी प्रगट कर लेते हैं। 1990 में मैंने उन्हें लिखा था कि वह 18 अप्रैल के सत्संग में प्रातःकाल सालवान स्कूल में या 3 बजे दुपहर मानवधाम में मुझे स्वयं आकर मिलें, ताकि मैं उनको देख सकूं। वह 18 अप्रैल को मानवधाम के सत्संग में आए। उनके साथ उनकी सुयोग्या भतीजी डा. रूपा भी आयी, जो उनके सारे व्यापार का संचालन करती हैं। श्री कृष्णलाल ने मुझे बताया कि उसी प्रातःकाल, मेरे रूप ने उनको कहा कि वह सालवान स्कूल न जाकर मानवधाम ही मुझे मिलें। यह कहने के बाद जब कृष्ण लाल ने चार हज़ार रुपए मंदिर के लिए भेंट किए, तो मैंने उसे कहा, "कृष्ण! मैं प्रातःकाल प्रगट नहीं हुआ था। यदि इसी विचार से तुम यह भेंट दे रहे हो, तो मुझे स्वीकार नहीं है।" श्री कृष्णलाल ने तुरन्त कहा, "महाराज! मैं यह सब जानता हूं।

परमदयाल जी भी मुझे इस सत्य के बारे में पूरा ज्ञान देते थे, और मुझ से प्यार करते थे। मेरा विश्वास अन्ध विश्वास नहीं है।" मैंने मन्दिर के लिए उनकी भेंट स्वीकार कर ली। कृष्ण लाल ने मुझे पहली बार अपने घर के और दफ्तर के टैलीफोन नम्बर दिए। इन दो सालों में मैंने कृष्णलाल को फोन नहीं किया। पहली अक्टूबर 1992 को राजपुर रोड से मैंने कृष्ण लाल को अचानक टैलीफोन किया। वह मेरे टैलीफोन को सुनते ही गद्‌गद् हो गया और कहने लगा "मैं पिछले 2-4 दिनों से आपसे मिलने के लिए बहुत बेकरार था। मैंने परमदयाल जी को याद किया, वह प्रगट हो गए। मैंने उन्हें शिकायत की कि मानवदयाल जी मुझे क्यों नहीं मिलते? उन्होंने कहा, "तुम चिन्ता मत करो। मानवदयाल स्वयं तुम्हें उचित समय पर बुला लेगा। आपने आज मुझे बुला ही लिया, मैं धन्य हूं। इसके पश्चात् श्री कृष्ण लाल जैन मेरे 7 अक्टूबर के विदेश प्रस्थान करने के समय तक मुझ से अलग नही हुआ।

7 अक्टूबर को हम प्रातःकाल 10 बजे आबूढाबी पहुंच गए। यहां पर श्री रवि पण्डित के कारण श्री सैटी और बहुत से दूसरे श्रद्धालु सत्संगी हवाई अड्डे पर स्वागत के लिए आए हुए थे। हम 10 अक्टूबर प्रातःकाल तक आबूढाबी में रहे। वहां के सत्संगों में पहले से अधिक संख्या में लोग सम्मिलित हुए। इस बार हम दुबई और शारजा भी गए। 10 अक्टूबर को ही सायंकाल करीब 5 बजे हम न्यूयार्क पहुंच गए। यहां पर न्यूजर्सी में श्री सुदर्शन लाल के घर पर

रहने के पश्चात्, मैं दूसरे दिन प्रातःकाल क्लीयरवाटर फ्लोरीडा के लिए रवाना हो गया और भाग्य माता जी आचार्य थैल्माकार्टर के साथ मेरीलैंड को रवाना हो गयीं। मैं 13 अक्तूबर तक क्लीयरवाटर टैम्पा और सैरासोटा में रहा और श्रीमती रूथबुश, श्रीमती ग्लोरिया आलब्रिटेन तथा सैंटपीटर्सबर्ग के यूनिटी गिरजाघर में सत्संग आयोजित हुए, जिनमें बहुत अधिक संख्या में लोगों ने भाग लिया। 13 अक्तूबर को मुझे सिन्टामेरिया कैलीफोर्निया में डा. सुरेश लोहड़ा के पास इसलिए जाना पड़ा कि उन्होंने अगले सप्ताह भारत जाना था और वह मुझे मिलने के लिए बहुत उत्सुक थे। उन्होंने हमेशा की भाँति मेरा स्वागत किया। 14 अक्टूबर को लौसेन्जलस कैलीफोर्निया से रवाना होकर मैं रिचमन्ड होता हुआ केवल दो दिन के लिए क्लीवलैंड में अपने बड़े सुपुत्र अरुण और उनकी सुयोग्या पत्नी मञ्जु जेतली के यहां ठहर कर वाशिंगटन डी. सी. होता हुआ 18 अक्टूबर रात्रि को 11 बजे ट्रिनीडाड पहुंच गया। यहाँ पर परमप्रिय श्री विश्वामित्र, डा. हरि, सैनफर्नांडो से और श्री गुरुलाल सिंह तथा अवतार सिंह एवं श्रीमती बारबा ब्रूस पोर्ट आफ़ स्पेन से हवाई अड्डे पर मेरे स्वागत के लिए मौजूद थे।

18 अक्टूबर से 25 अक्टूबर तक सैनफर्नांडो और पोर्ट आफ़ स्पेन में जितने सत्संग आयोजित हुए उनमें हिन्दू मुसलमान और ईसाई सत्संगी बड़े चाव से सम्मिलित हुए इस बार दीवाली के अवसर पर श्री कृष्ण मंदिर में मेरा विशेष सत्संग हुआ। उस सत्संग से पहले सैनफर्नांडो के बच्चों

ने छात्र-छात्राओं ने नाटक के रूप में भगवद्गीता, महाभारत के दृश्य प्रस्तुत किए जो देखते ही बनते थे। एक विशेष नाटक जो उन्होंने रचा था वह अति आकर्षक था जिसका उद्देश्य यह था कि ईश्वर में विश्वास रखने वाला व्यक्ति सभी मुसीबतों से मुक्त हो जाता है और नास्तिक डूबता है। दातादयाल जी ने भी इसी सच्चाई को बयान करते हुए कहा है :---

'तारने वाले ने तारा,
तर गए सब तर गए।
जिनको तरना था तरे,
भवनिधि के वो तट पर गए।
राधास्वामी ने दया की,
लाए नौका शब्द की।
जो चढ़े सो तर चले,
चूके जो वो सब मर गए।'

जिस श्रद्धा और निपुणता से सेन फरनेण्डो के बच्चों ने अपना पार्ट अदा किया, उनकी मिसाल भारत में नहीं मिलती। विदेश में रहने के ट्रिनिडाड के भारतीयों को सनातन धर्म से अगाध प्रेम है। मेरे सत्संग सुनने के पश्चात् सभी लोग बड़ी श्रद्धा से उमड़ पड़े और बड़े आदर सत्कार से आशीर्वाद लेने के लिए आए। कृष्ण मंदिर के सभी प्रबन्धकों ने पुनः यह आग्रह किया कि हर बार उनको प्रेरणा देने के लिए मुझे मंदिर में सत्संग देना और साधना शिविर आयोजित करना चाहिए। श्री

विश्वामित्र भराज के घर पर विशाल सत्संग के पश्चात् सेन फ़र्नाण्डो और पोर्ट आफ स्पेन के सभी सत्संगियों ने यह इच्छा प्रगट की कि मुझे साल में 3-4 बार ट्रिनिडन्ड आना चाहिए। श्री विश्वामित्र ने कहा कि ट्रिनिडाड को मानवता धर्म का मुख्य केन्द्र बना देना चाहिए। मैं यह सब कुछ आप की सचनार्थ इसलिए लिख रहा हूं कि परमदयाल जी और दातादयाल जी महाराज की भविष्य-वाणी---कि मानवता धर्म विश्वधर्म प्रमाणित होगा---सौफीसदी सत्य सिद्ध हो रही है। इसमें मेरा व्यक्तिगत कोई भी प्रयास नहीं है बल्कि परमतत्वाधार मालिके कुल परमसन्त परमदयाल फ़कीर चंद जी महाराज के द्वारा प्रदान की गई प्रेरणा काम कर रही है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जब ऐसे दृश्य मेरे सामने आते हैं और जब सत्संग सुनते - सुनते लोगों के आँसू बहने लगते हैं, तो मुझे एक आंतरिक आनन्द और परमशान्ति का अनुभव इसलिए होता है कि मैं आंशिक रूप में गुरु ऋण उतारने में कुछ सीमा तक सफलीभूत हो रहा हूं। यहां पर एक और बताने योग्य यह है कि ट्रिनिडाड के हिन्दुओं ने एक विशाल स्थान पर दीपावली मेला आयोजित किया। यह मेला कई मीलों के क्षेत्रफल में मनाया गया। इसमें अवतारों की झांकियां, भगवान श्रीकृष्ण और शंकर भगवान की विशाल साक्षात् मूर्तियां देखने योग्य थीं। मेरे वहां पर जाने से एक दिन पहले श्री रामानन्द सागर, जिन्होंने रामायण का चलचित्र निर्मित किया है, उस मेले का उद्घाटन करने के लिए आए थे। जब उन्हें पता चला कि मैं ट्रिनिडाड में हूं तो उन्होंने न मालूम किसी तरह से मेरा टेलीफोन नम्बर पता करके मुझ से बातें कीं। उन्होंने कहा, "महाराज जी, मैं कल

प्रातः कल ही यहां से हवाई जहाज द्वारा भारत रवाना हो रहा हूं। मुझे खेद है कि मैं आपके दर्शन नहीं कर सकता।" मैंने उन्हें कहा कि हमारा वार्तालाप ही काफ़ी है और कभी न कभी भारत में मुलाकात हो जाएगी। श्री रामानन्द सागर भी एक योगी हैं और उन्होंने मानवताधर्म की परा भक्ति को स्वीकार किया। मुझे पूरी आशा है कि आपको इस मासिक सन्देश से प्रेरणा मिलेगी।

25 अक्टूबर को मैं प्रातःकाल 7-30 बजे पोर्ट आफ़ स्पेन के हवाई अड्डे से अमेरिकन एयर लाइन्स के वायुयान से बोस्टन के लिए रवाना हो गया। इस मासिक संदेश के लिए यहां तक की सूचना पर्याप्त है। मैं सच्चे दिल से आपको इस महीने की सद्भावना और आशीर्वाद देता हूं और चाहता हूं कि आप मानवता के उसूलों पर चलते हुए राधास्वामी अवस्था को प्राप्त कर लें।

सब को राधास्वामी।

आपका फ़कीरमय
मानव

नोट

परसों हजूर मानवदयाल जी महाराज एक महीने के लिए बसन्त के सत्संग दौरे पर दक्षिण चले गए। रात को मेरे साथ उन्हें हमारा परमप्रिय धर्मपुत्र त्रिलोकचन्द शर्मा छोड़ने गया, टिकट भी उसी ने खरीदी थी। आज रात को (10-11 की रात) तीन बजे टेलीफ़ोन आया कि त्रिलोकचन्द को एक कार दुर्घटना में मृत्यु हो गयी है। रात भर मैं रोती रही। उसका प्यारा - 2 मुस्कुराता हुआ चेहरा मेरी आंखों के सामने घूमता रहा। इतना गम्भीर, दानी, तेजस्वी, भक्त, दयालु श्रद्धालु मेरा बेटा दुर्घटना का शिकार हो गया। उसकी उम्र अभी चालीस वर्ष से कम ही थी। उसके तीन बच्चे बेचारे अनाथ हो गये। सुन्दर, सुशीला, गुणवती, सुयोग्या पत्नी बिन्द्रा विधवा हो गई। हे मालिक तू इतना निर्दयी क्यों है? बड़े महाराज जी का भी वह बहुत लाडला था। इञ्जीनियर की नौकरी छोड़कर उसने पन्द्रह, सोलह साल पहले परमदयाल जी महाराज से आशीर्वाद लेकर अपना व्यापार शुरू किया था। कैमींकल्ज़ की फैक्ट्री लगाई थी। पिता जी ने उसके पिता जी को कहा था, "पण्डित! तू तो नौकरी कर करके ग़रीब ही रहा सारी उम्र। तेरा यह लड़का पैसे में खेलेगा, ऐश करेगा, तुम्हें तथा तुम्हारी स्त्री को भी ऐश कराएगा।" परमतत्व के अवतार की भविष्य-वाणी सत्य सिद्ध हुई। वह धनवान बना, पैसे से ही नहीं, दिल से भी। मन्दिर की उसने धन तथा शरीर से खूब सेवा की। वह हमें अरुण तथा प्रियदर्शी से कम प्रिय नहीं

था। त्रिलोक! अब हम तुम्हें समय पर कैसे बुलाएंगे? मेरे बेटे! तुमने इतनी जल्दी जाने की क्यों सोच ली? हमारा ध्यान भी नहीं आया तुम्हें। इतने निर्दयी क्यों बन गए बेटे? क्यों?

अपनी बूढ़ी विधवा मां,हमारी प्रिय बिन्द्रा तथा छोटे से नन्हे से लड़के तथा दोनों लड़कियों पर तनिक भी दया नहीं आई? एक बार मैंने कहा था कि तुम्हें मेरी उम्र लग जाए। मेरी प्रार्थना को ही ठुकरा दिया तुमने। मैं सन्त नहीं, ज्ञानी नहीं, एक सांसारिक महिला हूं। चीख - 2 कर, दहाड़ें मार २ कर रो रही हूं। मुझे सदैव ढाड़स बन्धाने वाले मेरे बेटे कहां हो तुम? कहां हो? याद है आज से तीन साल पूर्व जब गाल ब्लैडर का आपरेशन कराने मैं अमरीका जा रही थी और मैंने 'मानव मन्दिर' में यह छपवा दिया था कि, "यदि मेरा आपरेशन सफल नहीं हुआ और मैं भारत वापिस नहीं आई तो आप सब यह याद रखना कि मैं आपका प्यार पा कर धन्य हो गई। मैं भी आपको बहुत प्यार करती हूं। शायद आपके प्रेम को पाने के लिए मुझे फिर फिर इस संसार में आना पड़ेगा। अलविदा!"

इस छोटे से नोट के छपने के बाद तुम एक दिन मन्दिर में आए। मुझे मिलने के लिए मेरे कमरे में पहुंचे। मैं सो रही थी। तुम ने रो रो कर अपने अमूल्य आंसुओं से मेरे पांव को भिगो दिया। में झट से उठ बैठी। देखा कि तुम अभी भी मेरे पाँव पर सिर रख कर रो रहे थे। मैं घबरा कर बोली, "क्या हुआ त्रिलोक, क्या हुआ मेरे बच्चे? घर में सब खैरियत तो है?" तुम रो रो कर हिचकियां ले ले कर बोले, "क्या खैरियत है माता जी! आपने मानव

मन्दिर में क्यों छपवा दिया कि आप शायद अमरीका से वापिस नहीं आएं। ऐसा क्यों लिखा, आपने? क्यों हमारा दिल छलनी कर दिया? आप नहीं आएंगी लौट कर तो हम भी जी कर क्या करेंगे? मुझे उस समय तुम पर बहुत प्यार आया था। याद है, मैंने तुम्हारा माथा चूम लिया था! ऐसा मन कर रहा था कि तुम पर प्राण न्योछावर कर दूं। अब मैं तुम्हें पुकार रही हूं, कहां हो तुम? क्या मैं तुझ से पूछ सकती हूं कि तुम मुझे छोड़ कर बिना बताए ही क्यों चले गए? क्या दोष था हम सब का? मैं तो तुम्हारी बात मान कर मौत से युद्ध करके तुम्हारे पास वापिस आ गई। क्या तुमने यह दिन दिखाने के लिए ही मुझे जिन्दा लौटने को बुलाया था? तुमने तो रो रो कर अपने आंसुओं से मेरे पाँव भिगो दिए थे। मैं किसके पांव भिगोऊं? मैंने कभी नहीं सोचा था कि तुम इतने निर्दयी भी हो सकते हो। तुम जब मुझे छूते थे तो एक स्वर्गीय आनन्द मिलता था। ऐसे लगता था कि नन्हे अरुण और प्रियदर्शी मुझे छू रहे हैं। तुम जैसे बेटे को पा कर मैं शारीरिक पुत्रों को कभी याद भी नहीं करती थी। क्या ज़माना आ गया है? मां के सामने बेटे चले जाते हैं। धिक्कार है ऐसी माँ को। धिक्कार है ऐसी मां का जीना। अभागी है वह मां जिसका बच्चा चला जाए।

महाराज जी ने तुम्हें परसों ही तो कहा था, "त्रिलोक, तुम सन्त नगर में रहने वाले एक महान सन्त हो।" छलिया, तुमने कैसी मन को मोह लेने वाली मुस्कराहट दी थी! क्या पता था कि हमारे लिए वह तुम्हारी वह अन्तिम मुस्कुराहट थी। जब तुमसे हम टिकटें खरीदने के लिए कहते, तुम

पैसे नहीं लेते थे। बस इतना ही कह देते थे, "पिता जी! माता जी! यह थोड़ी सी सेवा तो मुझे करने दिया करो।" हमारे लिए देश विदेश में अब कौन फोन करेगा? कौन हमें सदा स्टेशन पर छोड़ने जाएगा? बेटे मेरे जहां भी हो सुखी रहो। मन्दिर, मन्दिर का सारा परिवार और समस्त मानव परिवार तुम्हें कभी नहीं भूलेगा। अलविदा प्यारे, आंखों के तारे त्रिलोक, अलविदा। अब सचमुच ही तुम त्रिलोकी के नाथ बन गए हो। तुम्हें हमारा कोटि-कोटि प्रणाम! राधास्वामी मेरे बच्चे! जाओ अपने धाम को, परमतत्त्व से मिलने के लिए।

तुम्हारी जन्म जन्म की माँ
भाग्य शर्मा

शोक समाचार

बड़े दुःख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि मानवता मन्दिर से दीर्घ काल से जुड़े सत्संगी परिवार के एक अमूल्य रत्न,सत्यनिष्ठ,कर्मठ,दानवीर,उत्साही, उद्यमी हजूर महाराज जी के अति प्रिय तरुण सत्संगी, श्री त्रिलोक चन्द्र शर्मा जी (जालन्धर वाले), का रविवार, 10 जनवरी, 1993, को एक कार दुर्घटना में शरीरान्त हो गया और वह 40 से भी कम की छोटी सी आयु में ही भक्ति और सेवा का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत कर परमधाम सिधार गए। शर्मा जी, परमसन्त हजूर मानवदयाल जी महाराज तथा पूज्य भाग्या माता जी की और मानवता मन्दिर की सेवा में सदैव तत्पर रहते थे। मानव मन्दिर परिवार श्री त्रिलोकचन्द शर्मा जी के शोक संतप्त परिवार की इस दुःखपूर्ण वेला में हार्दिक सहानुभूति प्रकट करता है तथा परमपिता राधास्वामी दयाल से हार्दिक प्रार्थना करता है कि दिवंगत आत्मा को परम शान्ति दें तथा शोकाकुल परिवार को यह अपूर्णीय क्षति सहन करने की क्षमता प्रदान करें।

आवश्यक सूचना

इस बार शिवरात्रि का महापर्व मानवधाम (दोहाई) में मनाया जा रहा है। इस दिन, अर्थात् शुक्रवार 19 फर्वरी 1993 को प्रात: 10 बजे शिव मन्दिर का उद्घाटन होगा और उसी समय गायत्री महायज्ञ, परमपूज्य परमसन्त हजूर मानवदयाल जी महाराज तथा 11 ब्राह्मणों द्वारा आरम्भ किया जाएगा। यह यज्ञ सायं 4 बजे तक चलेगा। सब सत्संगी इस अवसर पर आमन्त्रित हैं। वे पहुंच कर इन दोनों अवसरों का लाभ उठायें।

आपका मानवमय सैक्रेटरी
International Society of Humanism

फ़कीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट सुतैहरी रोड, होशियारपुर को दिया धन आयकर अधिनियम की धारा80-जी के अन्तर्गत,आयकर आयुक्त के पत्र नं. ***JUDL TRUST 13999 dt. 31-12-91***, साल ***30-4-93-94*** तक आयकर से मुक्त है।

शोक समाचार

मानवता मन्दिर, होशियारपुर का सत्संगी परिवार, एक सत्संगी कुटुम्ब के सदस्य श्री पदमचन्द गर्ग निवासी उग्रसेन बाज़ार, दिल्ली, की माताश्री हेमवती गर्ग के परलोक गमन पर अपनी हार्दिक संवेदना प्रकट करता है। परमतत्त्व परमेश्वर से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को चिर शान्ति प्रदान करें तथा शोक संतप्त परिवार को इस अपूर्णीय क्षति को सहन करने की क्षमता देवें।

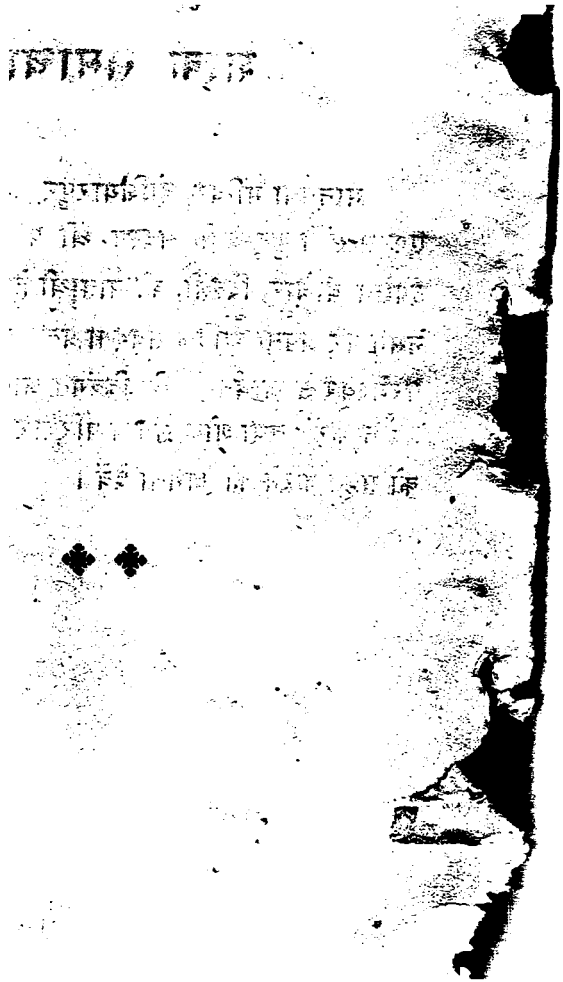

राधास्वामी नाम-ध्वनि

राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
अलख अगम और अनामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
परम सन्त का रूप धरा, जीवों पर उपकार किया ।
सीधा सच्चा मार्ग दिया, आये धुर पद धामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ॥
बन कर आये परम फ़कीर, हरने सब जीवों की पीर ।
परम दयालु दानी वीर, नाम दान के दानी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ॥
राम भी हो और कृष्ण भी तुम ।
तुम महावीर और बुद्ध गौतम ।
अक्षर ब्रह्म और पुरुषोत्तम, सब नामों में अनामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ॥
मानवता का किया प्रचार, निज अनुभव का दे दिया सार ।
ऐसे गुरु को बारम्बार, नमामि नमामि नमामि ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ॥
दाता दयाल के प्यारे तुम, मानव के रखवारे तुम ।
निर्गुण और सगुण भी तुम, सब के अन्तर्यामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ॥

BOOK POST

Regd No. 26265/74 FEB. 10th 1993

MANAV MANDIR PB HSP—5

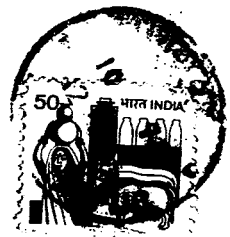

Address

976. Sh. S. Vithal, S/O. Sh.
Arjan Rao Ji, PO. TQ Banswada,
(Gauliguder)-NIZAMABAD. (A.P.).

From :

MANAVATA MANDIR
SUTEHRI ROAD.
HOSHIARPUR . 146 001
PHONE : 22639

Shiv Dev Rao Press Manavata Mandir. Hoshiarpur (Pb.)